त्रिदिवसीय पशु-कृषक प्रशिक्षण
(11–13 फरवरी, 2008)

सम्पूर्ण एवं पूरक पशु-आहार बट्टिका उत्पादन तकनीकी

CENTRAL ARID ZONE RESEARCH INSTITUTE
LIBRARY
JODHPUR

आयोजक

पशु–आहार तकनीकी इकाई
पशु विज्ञान एवं चारा उत्पादन प्रभाग
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान,
जोधपुर–342 003 (राजस्थान)

प्रायोजक

एच.एच. महाराजा हनवंत सिंह जी चैरीटेबल ट्रस्ट, जोधपुर

त्रिदिवसीय पशु-कृषक
प्रशिक्षण
(11–13 फरवरी, 2008)

सम्पूर्ण एवं पूरक पशु-आहार बट्टिका उत्पादन तकनीकी

विभागाध्यक्ष
डॉ. एन.वी. पाटील

संयोजक
डॉ. एच. सी. बोहरा

सह-संयोजक
डॉ. एस. के. कौशिश
डॉ. एम. एस. खान
डॉ. बी. के. माथुर
डॉ. ए. के. पटेल
डॉ. एम. पाटीदार
डॉ. पी. पी. रोहिल्ला
डॉ. ए. सी. माथुर
श्री आर. सी. बोहरा

आयोजक
पशु–आहार तकनीकी इकाई
पशु विज्ञान एवं चारा उत्पादन प्रभाग
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान,
जोधपुर–342 003 (राजस्थान)

प्रायोजक
एच.एच. महाराजा हनवंत सिंह जी चैरीटेबल ट्रस्ट, जोधपुर

HPUR.

विषय–सूची

	विवरण	लेखक	पृष्ठ संख्या
i.	प्राक्कथन	माननीय निदेशक	
1.	शुष्क क्षेत्र मे संतुलित पशु पोषण के वैज्ञानिक उपाय व व्यवस्था	डा. एन. पी. पाटील	1–5
2.	मरूस्थलीय पशुओं हेतु काजरी द्वारा विकसित पशु–आहार बट्टिका उत्पादन तकनीक	डा. एच. सी. बोहरा	6–11
3.	काजरी पशु–पौष्टिक दाणाः मरूस्थलीय पशुओं के लिए वरदान	डा. एच. सी. बोहरा	12–15
4.	लवण मिश्रण पोषक से मरू क्षेत्र मे पशुओं को स्वस्थ कर अधिक उत्पादन ले	डा. बी. के. माथुर	16–17
5.	काजरी लवण–बट्टिका का उपयोग कर मरूस्थल में पशुओं से ज्यादा उत्पादन प्राप्त करें	डा. एच. सी. बोहरा	18–21
6.	काजरी संस्थान की पशु–आहार बट्टिका स्वरोजगार में सक्षम	डा. पी. पी. रोहिल्ला	22–25
7.	शुष्क क्षेत्र में पशु पोषण प्रबन्धन	डा. बी. के. माथुर	26–30
8.	रूक्ष क्षेत्र के पशु उत्पादन सुधार में आवास व्यवस्था की महत्तवता	डा. ए. के. पटेल	31–36
9.	शुष्क क्षेत्र में वन चरागाह पद्धति से चारा उत्पादन	डा. एम. पाटीदार	37–45
10.	चारे की पौष्टिकता बढ़ाने हेतु उपचार विधियां	डा. आलोक चंद्र माथुर	46–49
11.	खेजड़ी पर्णो को उपचारित कर इनकी पोषकता बढाये	डा. एच. सी. बोहरा	50–51
12.	बकरी दुग्ध उत्पादः ग्रामीण क्षेत्रों में आय का स्त्रोत	डा. एम. एस. खान	52–53
13.	शुष्क एवं विषम परिस्थितियों में पूरक पशु–आहार बट्टीका एक वरदान	श्री आर. सी. बोहरा	54
14.	कार्यक्रम		
15.	प्रशिक्षणार्थीयों की सूची		

प्राक्कथन

मुझे यह जानकर अत्यंत हर्ष की अनुभूति हो रही है कि पशु–आहार तकनीकी इकाई, पशु विज्ञान एवं चारा उत्पादन प्रभाग, केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान (आई.सी.ए.आर.), जोधपुर, एच.एच. महाराजा हनवंत सिंह जी चैरीटेबल ट्रस्ट, जोधपुर द्वारा प्रायोजित एक त्रिदिवसीय (11–13 फरवरी, 2008), "सम्पूर्ण एवं पूरक पशु–आहार बट्टिका उत्पादन तकनीकी" पर "पशु–कृषक प्रशिक्षण कार्यक्रम" आयोजित करने जा रहा है। पश्चिमी राजस्थान के सूखाग्रस्त क्षेत्रों में रोजगार की दृष्टि से पशु–पालन एक महत्वपूर्ण व्यवसाय है। बार–बार पड़ने वाले सूखे एवं अकाल के फलस्वरूप फसलें प्रायः नष्ट हो जाती है एवं पशुओं हेतु चारा भी उपलब्ध नहीं हो पाता है। यहाँ तक कि, राजस्थान में जब सामान्य अथवा औसत वर्षा होती है तब भी सूखे एवं हरे चारे की 30 प्रतिशत तक न्यूनता आँकी गई है। सूखा एवं अकाल के समय, जबकि परिस्थितियाँ और विषम हो जाती है तब पशुओं के लिये चारा एवं घास अन्य प्रदेशों से आयात करना पड़ता है। काजरी द्वारा विकसित सम्पूर्ण एवं पूरक पशु–आहार बट्टिका उत्पादन तकनीक ऐसी परिस्थितियों में एक वरदान बनकर सामने आई है। पूरक एवं सम्पूर्ण पशु–आहार बट्टिकाऐं एवं पौष्टिक दाणा उत्पादन तकनीक को ग्रामीण स्तर पर राष्ट्रीय कृषि तकनीकी कार्यक्रम के अन्तर्गत भी सराहा गया है। पशु–आहार बट्टिका निर्माण तकनीक को व्यवसाय एवं ग्रामीण रोजगार के रूप में भी अपनाया जा रहा है। मैं उन सभी संभागियों एवं संस्थान के पशु विज्ञान एवं चारा उत्पादन प्रभाग के वैज्ञानिकों को पशु–कृषक प्रशिक्षणार्थियों हेतु इस प्रायोगिक लघु–पुस्तिका को तैयार करने के लिए बधाई देता हूँ। मैं एच.एच. महाराजा हनवंत सिंह जी चैरीटेबल ट्रस्ट, जोधपुर के प्रति भी आभार प्रकट करना चाहता हूँ जिन्होंने काजरी द्वारा पशु–पालको के लिए विकसित पशु–आहार उत्पादन तकनीक को ग्रामीण क्षेत्रों में पहुँचाने में रूचि दिखाई है। मैं इस प्रायोगिक प्रशिक्षण कार्यक्रम के सफलता की कामना करता हूँ व आशा करता हूँ कि अधिक से अधिक पशु पालक इस कार्यक्रम से जुड़कर लाभान्वित होगें।

दिनांक : 11/02/2008
स्थान : जोधपुर

(के.पी.आर. विट्ठल)
निदेशक
के. शु. क्षे. अ. संस्थान, जोधपुर

शुष्क क्षेत्र मे संतुलित पशु पोषण के वैज्ञानिक उपाय व व्यवस्था

डा. एन. पी. पाटील
विभागाध्यक्ष
पशुविज्ञान एंव चारा उत्पादन विभाग
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

भारत का 11 प्रतिशत भौगोलिक विस्तार गर्म शुष्क क्षेत्र में व्याप्त है जिसका लगभग 60 प्रतिशत क्षेत्र पश्चिमी राजस्थान के थार रेगिस्तान के 12 जिलों मे स्थित है। खेती की दृष्टी से यहॉ अत्यंत कठिनतम परिस्थितिया है जिसमें असंतुलित व वर्षा की कमी, जमीन की निम्न गुणवत्ता, जलसंसाधनो की कमी, अत्याधिक वाष्पीकरण से जमीन व वातावरण में नमीं का अभाव, ज्यादा वायुगति जिसके कारण सें यह क्षेत्र कृषि की गतिविधियों के लिए प्रतिकूल है। इन्हीं परिस्थितियों में लघु व सिमांत किसान अपने परिवार की उदर निर्वाह करने हेतु सदियो से पशुपालन अपनाते है जिसमें डेयरी तथा भेड़ व बकरी पालन मुख्य व्यवसाय है जो आर्थिक स्थिरता प्रदान करते है।

पशुपालन व्यवस्था में आर्थिक निरंनतरता बनाये रखने के लिए पशुपोषण एक महत्वपूर्ण विषय है व शुष्क क्षेत्र में अकाल की सत्यता को देखते हुए पशु पोषण की समस्या से किसान जुँझता है। पश्चिमी राजस्थान में अकाल वर्ष लगभग हर दो साल के अंतराल मे आ ही जाता है व अतिशुष्क क्षेत्र जैसे की बाडमेर, जैसलमेर व बीकानेर जिलों मे अकाल दो या अधिक वर्षो तक निरंतर बना रहता है। अकाल का सीधा असर कृषि उत्पादन पर होता है व पशुपालन व्यवस्था भी अकाल वर्षो मे बिगडती है जिसके कारण पशुपोषण की समस्या गंभीर हो जाती है। वर्ष 2003 की गणनानुसार पश्चिमी राजस्थान में पूर्ण राज्य का 48 प्रतिशत पशुधन है जिसमे 41 लाख गायों, 32 लाख भैसों, 73.5 लाख भेड़ व 83.7 लाख बकरियां शामिल है। इस अधिकतम पशुधन संख्या (285.7 लाख) के निर्वाह हेतू चारागाह से घास चारा उत्पादन पशुधन की आवश्यकता की अपेक्षा 60 से 72 प्रतिशत कम होता है व अकाल समय मे इस कमी को 76 से 82 प्रतिशत मात्रा तक देखी गई है। इस कमी को देखते हुऐ पशुपोषण के उपाय व विकल्प ढुढँना आवश्यक है।

शुष्क क्षेत्रों मे पशुपोषण के विकल्पः

शुष्क क्षेत्र मे पशुपोषण का मुख्य आधार चारागाह है, व राजस्थान कृषि भूमि का लगभग 45 प्रतिशत भूभाग चारागाह का माना है व पश्चिमी राजस्थान के शुष्क क्षेत्र के लगभग 95 प्रतिशत भूभाग मे केवल चारागाह व्यवस्था है कारण की यहॉ की भूमी देश द्वारा किये गये 6 से 8 क्षेत्र वर्गीकरण में आती है जो वायु व पानी से भूमी वहन की समस्या से ग्रसित है व ऐसे क्षेत्र में चारागाह व्यस्था ही उचित है। 500 मि.मी. या उससे कम बारिश में बाजरा, मूँग, मोठ, ग्वार जैसे फसले ली जा सकती है परतु बालुमय क्षेत्र में जहॉ बारिश की मात्रा मि.मी. या उससे कम है वहॉ क्षेत्रीय घास लगाई जानी चाहिए न की खेती कि जाये।

अंजन घास (सेन्करस सिलियेरीस) व धामण (सेन्करस सेटिजेरस) इस क्षेत्र मे अच्छा उत्पादन दे सकती है साथ ही शुष्क क्षेत्र की दुसरी घासों की प्रजातियॉ भी लगाई जा सकती है जैसे की डायँकेन्थीयाम ॲनुलाटम, पेनिकम ऐन्टीडोटेल व पेनिकम टर्जिडम व इसे विकसित करने

हेतु केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर मे विशिष्ठ कृषि व्यवस्था भी तैयार की है। व गोचर/चारागाह व्यवस्था के कुछ उपाय करके इन घास चारो का उत्पादन बढाया जा सकता है। एक पूर्ण विकसित चरागाह से लगभग 30–35 क्विटल प्रति हेक्टर सुखा चारा उपलब्ध हो सकता है जिसमें लगभग 40–50 पशुओं को 100 हेक्टर चरागाह क्षेत्र मे पोषण हेतु रखा जा सकता है।

पश्चिमी राजस्थान मे चरागाह क्षेत्र मे खेजडी वृक्षों की उपलब्धता में पशुओं के लिये छाया व इसकी पत्तियों के चारे में मिलाकर देने से चारें की पौष्टिकता बढाता है, बकरी व भेड़ जैसे छोटे पशुओं के लिए यह एक अत्यंत पोष्टिक चारा है व एक पूर्ण विकसित खेजड़ी वृक्ष से लगभग 15 किलो पत्तियॉ जिसे स्थानिय भाषा मे ''लूंग'' कहा जाता है उपलब्ध हो सकती है। कुछ चरागाह क्षेत्र मे देशी बेर की झाड़ियॉ ''बोरडी'' सर्दी के मौसम में इसकी पंत्तियॉ, ''पाला'' जो की एक प्रोटीन युक्त चारा है, बकरी व भेड़ के लिए उपयुक्त चारे का स्त्रोत है। जिसकी उत्पादकता लगभग 125 किलो ग्राम प्रति हेक्टर ली जा सकती है साथ ही ऐसे वृक्ष व झाडियों की प्रजातियॉ भी उपलब्ध है जो चरागाह क्षेत्र में विकसित की जा सकती है व जो चारें का स्त्रोत बन सकते है और साथ में इस क्षेत्र में ज्यादा वायुगति सें मिट्टी के बहाव में रोकथाम कर सकते है।

सिल्वीपाश्चर व्यवस्था मे पशुपोषण

इस व्यवस्था में घास की किस्मों के साथ ऐसे पेड लगवाये जाते है जिनकी पत्तियॉ चारें के रूप में पशुआहार में उपयोग मे ली जाती है। यह व्यवस्था उन सभी शुष्क क्षेत्र में अपनायी जानी अर्थपूर्ण है जहॉ बारिश 200 मि॰ मी॰ या उससे कम होती है या वह क्षेत्र जहॉ पथरिली व निम्नस्तर की जमीन उपलब्ध है। ऐसे क्षेत्र के लिए अकेशिया सेनेगल, अकेशिया टोर्टीलिस, हार्डविकिया बायनाटा जैसे पेड, बेर की झाडी में बोरडी झिझिपस न्यूम्यूलेरीया, रोटन्डीफोलिया। रूक्ष क्षेत्र के जो घास जैसे सनकरस सोटिजिरस (धामण) व सेन्क्रस सिलियोरीस (अंजन) साथ लगाये जा सकते है। इन सब व्यवस्था में भेड़, बकरी व गायों का निर्वाह अच्छी तरह किया जा सकता है व भेड़ों मे ऊन उत्पादन व बकरियों से दूध व मांस उत्पादन लिया जा सकता है। अंजन पेडो की पत्तियॉ व अंजन घास व्यवस्था ने घास व पत्तियों का उत्पादन 9 वर्षो तक शोध के बाद यह पता चला है कि घास उत्पादन लगभग 13 क्विंटल प्रति हेक्टर व अजन पेडो से पत्तियॉ लगभग 6.5 क्विंटल प्रति हेक्टर प्राप्त की जा सकती है व कुल 15 क्विंटल चारे उत्पादन व्यवस्था मे लगभग 4 भेड़ो को एक वर्ष भर प्रति हेक्टर खिलाया जा सकता है।

पूरक आहार व संतुलित पशुपोषण

संतुलित पशुपोषण हेतू चरागाह व्यवस्था पर निर्वाह करने वाले पशुओं को पूरक आहार देना आवश्यक है। क्योंकि यह पाया गया है कि चरागाह से चारा उत्पादन की मात्रा में कमी आती है व साथ ही चारें की गुणवत्ता में भी कमी देखी गई है जिस वजह से पशुओं का पोषण पर्याप्त मात्रा में होना मुश्किल हुआ है जिसका सीधा असर पशु उत्पादन व पशु स्वास्थ पर दिखाई देता है। पूरक पोषण हेतू ऊर्जा, प्रोटीन, विटामीन व मिनरल स्त्रोतों को अलग–अलग या मिश्र रूप मे संतुलित दाने के रूप में पशुओं को खिलाया जा सकता है। इन पोषण तत्वों से पूर्ण अलग–अलग प्रचलित या प्रचलित स्त्रोत उपलब्ध है जिनका उपयोग संतुलित दाना या विशिष्ठ पूरक मिश्रण के रूप मे

किया जा सकता है। संतुलित दाने मे सम्मिलित स्त्रोतों का उपयोग पशुओ की ऊर्जा, प्रोटीन, खनीज व विटामीन की कमी को दूर करने के हेतू होता है। संतुलित दाने की मात्रा चरागाह से उपलब्ध चारे की मात्रा, गुणवत्ता व पशु उत्पादन क्षमतानुसार निश्चित की जाती है जो कि गाय, भैंस मे लगभग 3 किलोग्राम से 8 किलोग्राम रह सकती है व भेड़/बकरीयों मे यह मात्रा 200 ग्राम से 500 ग्राम तक की जा सकती है। पूरक पोषण हेतू प्रचलित व अप्रचलित आहार अवयवों का सम्मिलित उपयोग करते हुए युरिया–सीरा व खनिज मिश्रण या इनके ब्लॉक्स बनाये जाते है जो पशुओं को 300–500 ग्राम मात्रा मे प्रति गाय, भैंस व 50–100 ग्राम प्रति भेड़ बकरी खिलाये या चटवाये जा सकते है। इस पूरक आहार व्यवस्था को आवश्यक पोषक तत्वों की पूर्ति हो सकती है व पशु उत्पादन व्यवस्था व स्वास्थ ठीक रह सकता है।

शुष्क क्षेत्र में पशुआहार की कमी निरंतर बनी रहती है इसका कारण क्षेत्र में अकाल जैसी परिस्थितियॉ लगभग हर दुसरे साल उत्पन्न होती है व हर वर्ष शुष्क क्षेत्र के किसी न किसी स्थान में अकाल परिस्थिती रहती है। चरागाह से चारा उत्पादन व गुणवत्ता की कमी व पूरक आहार के आयोजन में कठिनाई देखते हुए वैज्ञानिको ने संपूर्ण आहार की संकल्पना तैयार की जिसमे घासचारा अथवा मूख्य फसलो से प्राप्त उप–उत्पाद जैसे कडबी, पराल, गेहूँ–भूसा इ॰ के साथ पूरक आहार में सम्मिलीत घटको को एक साथ मिलाया जाता है व इस संपूर्ण मिश्रण को संपूर्ण मिश्रीत आहार अथवा संपूर्ण आहार ब्लॉक्स के रूप मे पशुओ को खिलाया जाता है। इस तरह के सपूर्ण पशु–आहार शुष्क क्षेत्र मे पशुधन बचाने हेतू घास चारो का ट्रक/रेल्वे द्वारा वहन एक आम बात है व सिर्फ सुखे चारों को पशुओ के खिलाने से पोषण की संतुलित न होने से पशु उत्पादन या पशुस्वास्थ पर विपरीत असर होता है। ऐसी व्यवस्था में अगर सपूर्ण पशु आहार के ब्लॉक्स तैयार करके अकाल ग्रस्त क्षेत्रों में पहुंचाये जाए तो वहन व्यवस्था में कम खर्चे मे ज्यादा पशु आहार वहन हो सकता है व पशुपोषण भी संतुलित होते हुए पशुउत्पादन व स्वास्थ ठीक रखा जा सकता है।

संपूर्ण पशुआहार बनाने हेतू घास चारा व अन्य पशुआहार स्त्रोत उन क्षेत्रों की पशुधन आवश्यकता से अधिक मात्रा मे उपलब्ध है, वहॉ से मंगवाना लाभदायक हो सकता है। पशु आहार मे घास चारा व पोषक दाना बनाने मे जो स्त्रोत उपयोग लिए जाते है, यह सभी उस क्षेत्र में उपलब्धता व आर्थिकदृष्टि के अनुसार सस्ते भाव को देखते हुए इकठे कर सकते है। साथ ही क्षेत्र में प्रचलित पशुओ की खान पान व्यवस्था व स्त्रोतोनुसार संतुलित आहार–विभिन्न चारा व पशु दाने के स्त्रोत से बनाये जाते है। इन सब स्त्रोतो को पिसवाकर व घास चारो को भी 2–4 से.मी. टुकडो में कटवाकर मिश्रण रूप में जानवरों को दिया जाए तो उसे संपूर्ण मिश्र आहार कहा जाता है। ऐसे संपूर्ण मिश्र आहार बनाने हेतू विभिन्न चारों व दाने के स्त्रोतों का पोषक तत्वों का मूल्याकंन करना बहुत जरूरी होता है जिससे मिश्रित आहार में इन स्त्रोतों का प्रयोग 'उचित मात्रा मे किया जा सके। साथ ही जिन पशुओं को यह संपूर्ण मिश्र आहार देना हो उन पशुओं की उत्पादन क्षमता उनका भार की जानकारी होना आवश्यक होता है। इस तरह अनेक प्रकार के संपूण मिश्र आहार विशिष्ठ क्षेत्र अनुरूप बनायें जा सकते है व क्षेत्रीय घासचारा व दानें के अवयवों की उपलब्धतानुसार इसके मूल्यो में कमी ला सकते है। अनेक विकासशील देशो में क्षेत्रीय आवश्यकताओं को समझते हुए नानाविध संपूर्ण मिश्र आहार बनायें गए है। जिससे पशु का आहार अगर केवल उपलब्ध खाद्य

व घास चारे द्वारा बनाया जाए तो वह कम लागत से बन पाता है परंतु कुछ खाद्य व घास चारा अगर बाहरी क्षेत्र से लाया जाये तो उसमें उन पदार्थो का वहन खर्च भी शामिल होता है व मुल्य में बढोतरी होती हैं। फिर भी अकाल जैसी परिस्थितियो मे ट्रक या रेलवे द्वारा घास चारा व अन्य खाद्यान्नों की एक से दुसरे क्षेत्र मे वहन होता है व ऐसी परिस्थिती मे केवल घास चारा या कुछ पशुखाद्यों की ट्रक/रेलवे द्वारा वहन करना आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद नही है तथा संपूर्ण मिश्र आहार के ब्लॉक बनाकर अकालग्रस्त क्षेत्र मे भेजना आसान पर्याय है। ब्लॉक बनाने हेतू दाब द्वारा संचालित समुचित दाब यन्त्रो का उपयोग किया जाए तो लगभग 2 कि. ग्रा. से 10–12 कि. ग्रा. तक संपूर्ण मिश्र पशु आहार ब्लॉक बनाये जा सकते है। भारत व अधिकतम विकासशील देशो में इस तरह के पशु आहार ब्लॉक बनाए जाते है। जिसके लिए दाब यंत्र भी उपलब्ध है। पशुआहार ब्लॉक के निम्नलिखित लाभ देखे गए हैः

1. संपूर्ण पशुआहार ब्लॉक में उन सभी अप्रचलित चारा दाने के स्त्रोतों का उपयोग भी किया जा सकता है जो पशुआहार मे सामान्यतः सम्मिलित नही होते है व इससें पशुआहार के मूल्य मे कमी हो जाती है।
2. संपूर्ण पशुआहार ब्लॉक में संतुलित पोषण का ध्यान रखा जाता है जिससें पशुओं की उत्पादन व्यवस्था व उत्पादकतानुसार संतुलन लाया जा सकता है।
3. संपूर्ण पशुआहार ब्लॉक के रूप में बनाने से घासचारा व दाने से स्त्रोत को व्यवस्थित रूप से लगभग एक–तिहाई कम जगह में संग्रहित किये जा सकता है व ऐसे ब्लॉक्स एक जगह से दुसरी जगह आसानी से परिवहन किया जा सकता है व वहन खर्चे मे कटौती कर सकते है।
4. घास चारा व दाने के स्त्रोत जिस प्रदेश में व जिन ऋतुओं मे ज्यादा मात्रा में उपलब्ध हो तब पशुआहार के ब्लॉक्स वहॉ बनवाकर, संग्रहित कर सकते है व इस तरह की पशुचारा बैंक या पशुचारा डिपो बनाये जा सकते है जहॉ से आवश्यकतानुसार उस क्षेत्र मे पशु आहार ब्लॉक्स तो जा सकते हैं जहां अकाल से पशु चारा या पशु खाद्य की कमी हुई है।
5. कुछ नियंत्रित प्रक्रिया द्वारा पशुआहार ब्लॉक्स का संग्रह काफी समय तक किया जा सकता है व यह एक आर्थिक रूप से विकसित किया जाने वाला व्यवसाय हो सकता है।
6. अप्रचलित चारा व पशु खाद्य जो सामान्यतः पशु खाते नहीं है उनका उपयोग संपूर्ण पशु आहार ब्लॉक्स में प्रचालित चारा या पशुखाद्यो के साथ उचित मात्रा में किया जाता है व इस व्यवस्था में पशु, पशुआहार मिश्रण को बिना दुविधा के ग्रहण करता है जिससें अप्रचलित चारे का उचित उपयोग व पशुपोषण खर्चे में कमी आ सकती है। पशुओ की स्वरूचि नियंत्रित की जा सकती है।
7. संपूर्ण पशु आहार में घास, चारा, दाना, मिनरल व विटामीन मिश्रण का योग्य समावेश होने से पशुओं की पाचन क्रिया ठीक रहती है उत्पादन क्षमता मे बढोतरी होती है।
8. संपूर्ण पशुआहार ब्लॉक्स का उपयोग करना पशु व्यवसथा की दृष्टि से भी लाभप्रद है व जिससे मनुष्य श्रम का उचित उपयोग हो सकता है।

9. संपूर्ण पशु आहार का उपयोग पशुओं की वृद्धि, दूध, मांस, ऊन उत्पादन मे देखा गया है। जिसमें प्रचलित आहार व्यवस्था की अपेक्षा कम लागत से पशुओं मे ज्यादा उत्पादन क्षमता देखी गई है व प्रति/कि. ग्रा. वजन वृद्धि पर दूध उत्पादन मे आहार खर्च में कमी देखी गई है।

इन सभी पशुपोषण व्यवस्थाओं का उपयोग शुष्क क्षेत्र मे संभव है व विभिन्न क्षेत्रनुरूप चरागाह व्यवस्था, भूमि की उपलब्धता व गुणवत्तानुसार पशु पोषण की व्यवस्था का चुनाव किया जा सकता है। शुष्क क्षेत्र मे अकाल परिस्थिती को ध्यान मे रखते हुए जो व्यवस्था अधिकतम आर्थिक लाभ दे उसे अपनाया जाना चाहिए। अत्यधिक चारे व दाने की कमी न आये इस हेतू चारे व संपूर्ण पशुआहार ब्लॉक्स की बैंक भी विभिन्न क्षेत्रों मे बनवायी जाए तो पशु उत्पादन व पशुस्वास्थ ठीक रखा जा सकता है जिससें क्षेत्र मे आर्थिक परिस्थिती समृद्धि बनी रहे।

संपूर्ण पशुआहार में सम्मिलित अप्रचलित फसल उत्पादों की उचित मात्राऐं

फसल उत्पाद	**संपूर्ण आहार मे मात्रा (प्रतिशत)**
1. सूखी घास	30–50
2. गेहूँ भूसा/तूडी	50
3. चावल भूसा	40–50
4. बाजरा कडबी	50–60
5. तुम्बे की खल	15–25
6. रायड़े की खल	10–20
7. अंग्रेजी बबुल की फली का चूरा	10–20
8. ग्वार कोरमा	10–20
9. ज्वार कडबी	
10. मसुर चारा	

विभिन्न संपूर्ण पशुआहार में पोषक तत्वों व पोषक मूल्यों की मात्रा

विवरण	मात्रा प्रतिशत
क्रुड प्रोटिन	9 – 16
क्रुड रेशा	12–30
क्रुड वसा	0.9 – 6.8
नत्रजन मुक्त तत्व	33–60
अम्लीय अघुलनशील खनिज	1.9 – 7.9
केल्शियम	0.2 – 0.8
फॉस्फोरस	0.2 – 0.8
कुल पाचक तत्व	48 – 65
पाच्य प्रोटिन	9.5 – 10.6

मरूस्थलीय पशुओं हेतु काजरी द्वारा विकसित पशु-आहार बट्टिका उत्पादन तकनीक

डा. एच. सी. बोहरा
पशु–पोषण प्रयोगशाला, पशुविज्ञान एंव चारा उत्पादन विभाग
केन्द्रिय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर – 342003

बट्टिका की महता

राजस्थान के कुल भौगालिक क्षेत्र का लगभग 62 प्रतिशत भू–भाग (12 पश्चिमी जिले) शुष्क मरूस्थलीय क्षेत्र है । उष्ण एवम् न्यून–वर्षा के कारण इस क्षेत्र के कृषकों का मुख्य व्यवसाय एवम् आय का स्त्रोत पशु–पालन आधारित कृषि है । निम्न व असमय वर्षा के कारण कृषि उत्पादन प्रभावित होता रहता है । इस क्षेत्र में पडत एवम् चारागाहों का विस्तृत क्षेत्र है जो कि पशुओं को चराई के लिये उपलब्ध रहता है पर कम वर्षा के कारण जो भी पशु–खाद्य उपलब्ध रहता है व न केवल मात्रा वरन् गुणवत्ता में भी निम्नतर होता है । ऐसी स्थिति में पशुओं को न केवल आवश्यकतानुरूप चारा की कमी रहती है अपितु उपलब्ध चारे में निम्न पोषकता के कारण भी पशुओं में कुपोषण की समस्या बनी रहती है । इसके कारण पशु–उत्पादन प्रभावित होता है । ऐसी अवस्था में पशु आहार–बट्टिका जो कि विभिन्न अति–आवश्यक तत्वों का संमिश्रण है, विषेश लाभदायक सिद्ध हो सकती है । यह पशुओं द्वारा आवश्यकतानुसार अति आवश्यक पोषक तत्वों को ग्रहण करने का सुगमतम उपाय है । इसके चाटने से पशु द्वारा ग्रहित सूखे चारे के साथ–साथ पोषक तत्व भी मिश्रित होते रहते है । पशु आहार–बट्टिका के पोषक तत्व शनैः शनैः इन पशुओं के रूपन (प्रथम आमाशय) में विद्यमान लाभ–दायक सूक्ष्म जीवों को पोषण प्रदान कर इनकी संख्या में वृद्वि में सहायक होते है । यही सूक्ष्म–जीवी चारे में विद्यमान संरचनीय शर्करा (सैल्यूलोज) का विघटन कर वसा अम्लों का उत्पादन करते है जो कि अतंतः पशु की आहार नालिका में अवषोशित हो जाते है । यही अम्ल पशुओं में उर्जा के स्त्रोत तथा पशु द्वारा उत्पादित दूध में विद्यमान वसा के मुख्य घटक है । रूपन (ओदरी) में पाये जाने वाले लाभदायक सूक्ष्म–जीवी बट्टिका में विद्यमान सीरे का उपयोग उर्जा के स्त्रोत के रूप में, एवम् यूरिया तथा लवण–मिश्रण में पाये जाने वाले गंधक–घटक का उपयोग सूक्ष्म जीवी प्रोटीन के निर्माण में करते है । बट्टिका में पाये जाने वाले विटामिन – लवण मिश्रण, नमक एवम् डोलोमाइट–चूना पशु के विभिन्न खनिज लवणों की आवश्यकता की पूर्ति करते है । गेहूँ की चापड़ जो कि न केवल बट्टिका का मुख्य घटक है अपितु बट्टिका को स्थायित्व प्रदान करता है साथ ही उच्च कोटि की प्रोटीन, संरचनीय एवम् विलनीय कार्बोहाइड्रेट तथा बी समूह के विटामिनों का मुख्य स्त्रोत भी है। इस बट्टिका में उपयुक्त विशेष प्रकार का कार्बनिक बंधक हालाकि बट्टिका को सुद्यढ़ बनाने के लिये काम में लिया गया है, पर, यह पशु–आहार नालिका में पूर्ण रूपेण पचनीय है तथा पशु को उर्जा प्रदान करता है। अतः बट्टिका

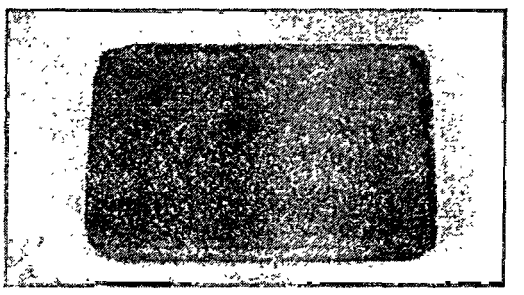

में विद्यमान पोषक तत्व रूमन परिस्थिति तंत्र को सुधार कर लाभदायक सूक्ष्म जीवियों की वृद्धि के उपयुक्त बनाते है जिससे सूखे चारे का पाचन सहज हो सके तथा पशुओं के विटामिनों, कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन एवम् अति–आवश्यक खनिज लचणों की आवश्यकता की पूर्ति करके उनके स्वास्थ्य में सुधार कर उत्पादन में भी वृद्धि करे।

पशु–आहार बट्टिका अति–आवश्यक पोषक तत्वों से युक्त विभिन्न पशु–आहारो का संकेन्द्रित प्रारूप है। काजरी संस्थान एवम् इसके द्वारा गोद लिये गये गावों में किये गये अध्ययन से इसकी उपयोगिता प्रमाणित हो चुकी है । यह मरू प्रदेश के उन पशुओं के लिये विषेश लाभदायक है, जिनको खलीहानों में सूखे चारे या कृषि के उत्पाद अथवा निम्न कोटि के चारागाहों पर निर्भर रहना पड़ता है । उनके लिये यह बट्टिका एक पौष्टिक पूरक पशु आहार है । इसके उपयोग (चाटने) से पशुओं (गाय, भैंस, भेड़, बकरी इत्यादि) में अति–आवश्यक पोषक तत्वों की आवश्यकता की आपुर्ति होती है जिससे पशुओं द्वारा ग्रहित सूखे चारे का पाचन सुचारू रूप से हो सके । हाल ही मे राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल में किये गये अध्ययन से यह ज्ञात हुआ है कि इस प्रकार की बट्टिका खिलाने से पशु में सूक्ष्म जीवियों द्वारा सैल्यूलोज के विघटन से उत्पन्न मिथेन गैस के उत्पादन में भी कमी होती है। अतः हरित–गृह गैस के उत्पादन में कमी कर पर्यावरण क्षरण को रोकने में भी यह बट्टिका लाभकारी है।

केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान (काजरी), जोधपुर के पशु–आहार तकनिकी प्रकोष्ट द्वारा ग्रामीण स्तर पर पौष्टिक पशु आहार बट्टिका बनाने की सुगम विधी विकसित की गई है। इस विधी द्वारा साधारण ज्ञान रखने वाला किसान भी अपने यहॉ उपलब्ध विभिन्न पशु–आहार एवम् साधरणतम् यंत्रों द्वारा यह बट्टिका बना सकता है। जिसका विवरण निम्न प्रकार है:

मुख्य घटक

1. उर्जा के स्त्रोत

सीरा या मालासेस अथवा पशुओं को खिलाने वाला गुड़ । बट्टिका बनाने के लिये गहरे रंग (भूरे से स्लेटी) का गुड उत्तम रहता है ।

2. प्रोटीन के स्त्रोत

(अ) खल या चूरी : सोयाबीन खल या अन्य कोई भी तिलहन फसलों की खल । प्रोटीन के रूप में ग्वार–चूरी या ग्वार–कोरमा भी काम में लिया जा सकता है ।

(ब) यूरिया : यह पशु के रूमन (औदरी) में पाये जाने वाले लाभदायक सूक्ष्मजीवियों द्वारा उच्च कोटि के सूक्ष्मजीवी–प्रोटीन में बदल दिया जाता है जो कि अततः पशु की आहार नाल में अवषोशित हो जाता है ।

3. लवणों के स्त्रोत

(अ) साधारण नमक : आयोडीन युक्त नमक की आवश्यकता नही है क्योकि जो लवण–मिश्रण काम में लिया जाता है उसमें आयोडीन आवश्यक मात्रा में उपलब्ध रहता है। कोई भी पीसा हुआ नमक काम में लिया जा सकता है पर डिडवाना से प्राप्त नमक जिसमे सोडियम सल्फेट भी है, बट्टिका बनाने के लिये उत्तम रहता है।

(ब) डोलोमाइटः यह कैलशियम एवम् मैगनिशियम कार्बोनेटों का यौगिक है तथा कैलशियम व मैगनिशियम लवणो का अच्छा स्त्रोत है।

(स) लवण–मिश्रणः विभिन्न अति–आवश्यक लवणों का मिश्रण । विटामिन युक्त लवण मिश्रण जिसमें विटामिन ए, डी–3, ई, नियासिनेमाइड एवम् कैलशियम, फास्फोरस, कोबाल्ट, ताम्बा, आयोडिन, लौहा, मैगनिज, सैलिनियम व जस्ता इत्यादि जिसमें

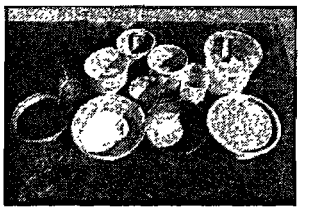

उपयुक्त मात्रा में विद्यमान हो वह उत्तम रहता है। पर यदि इस प्रकार का लवण–मिश्रण उपलब्ध न हो तो साधारण लवण–मिश्रण जिसमें विटामिन ए का उपयुक्त मात्रा में समावेश कर उपयोग में लिया जा सकता है। इसके लिये बाजार में उपलब्ध 10,000 इकाई प्रति मि. मी. विटामिन ए के घोल (निकोलस पिरामल इंडिया लिमिटेड का नाइकोरिच ए डब्लू एम) की लगभग 30 मि.ली. की मात्रा एक किलो ग्राम साधारण लवण मिश्रण में मिलाने की आवश्यकता होगी ।

4. संरचनीय घटक

(अ) गेहूँ का चापड़ को सर्व–श्रेष्ठ माना गया है । पर यह उपलब्ध न हो तो जौ, चावल इत्यादि किसी भी अन्न की चापड़ काम में ली जा सकती है । गेहूँ की चापड़ बट्टिका को न केवल संरचनीय स्थायित्व प्रदान करती है, वरन् यह संरचनीय व विलयशील कार्बोहाइड्रेट एवम् बी–समूह के विटामिनो का भी मुख्य स्त्रोत है । छोटे दाने वाली गेहूँ की चापड़ हमेशा उत्तम रहती है । यदि बड़े दाने का चापड बट्टिका बनाने के उपयोग में लिया जाये तो सीरे व पानी की मात्रा आवश्यकतानुसार बढ़ानी पड़ेगी । इस प्रकार की बट्टिका को दबाने में ज्यादा दाब की आवश्यकता होगी तथा इसके अलावा जो बट्टिका प्राप्त होगी उसकी ऊपर की सतह समतल न हो कर ऊपर की ओर उभरी तथा बट्टिका खुरदरी व भंगुर होगी ।

5. **कार्बनिक–बन्धक (बाइन्डर)** : ग्वार–गम उद्योग का उप–उत्पाद (गम–डस्ट) इसके लिये विषेश उपयुक्त है । ग्वार–गौंद पाउडर से न केवल बट्टिका अच्छी बनती है, वरन् इससे बट्टिका बनाते समय घटको का मिश्रण–पात्र की दिवारों पर भी चिपकता नही है । अतः इस कार्बनिक–बन्धक के उपयोग से घटको का दिवार से चिपकने से होने वाला नुकसान निम्नतर होता है । यदि गम–डस्ट उपलब्ध न हो तो मैथी के बीजों का चूर्ण भी उपयोग में लिया जा सकता है । उपरोक्त घटको में से केवल गेहूँ के चापड़ को संचय करने में सावधानी की आवश्यकता होती है । चक्की से प्राप्त ताजे चापड में नमी प्रचुर मात्रा में विद्यमान रहती है । इसलिये इसको पहले धूप में फैंला कर सुखा ले तब लोहे के ड्रम में संचय करे । बिना सुखाये संचय करने पर चापड़ में धान की इल्ली व सुंडी लग सकती है । साधारणतयाः संचयित चापड़ को कुछ घन्टों तक धूप में रख कर काम मे लेना चाहिये । उपरोक्त घटकों को किसी विषेश क्षेत्र में उपलब्ध उसी प्रकार के पषु–खाद्य पदार्थो द्वारा विस्थापित किया जा सकता है ।

यंत्रो की आवश्यकता

बट्टिका को कुटीर–उद्योग के अनुसार बनाने के लिये निम्न यंत्रो की आवश्यकता होती है ।

(क) **तुला (तराजु)** : 10 किलो समता वाली दो पलड़ो की तुला अच्छी रहती है ।

(ख) **मिश्रक (मिक्सर–यंत्र)** : एक बार में 10 बट्टिका बनाने के लिये आवश्यक घटको को हाथ द्वारा, प्लास्टिक, इस्पात या लोहे के बड़े बर्तन में मिलाया जा सकता है।

(ग) **बट्टिका साँचे** : इसके लिये लकड़ी के सॉचे भी काम में लिये जा सकते है । पर लोहे के सॉचे जिनको बाहर की तरफ खोला जा सके तथा एक लोहे की कील लगाकर बन्द किया जा सके, विषेश उपयुक्त है ।

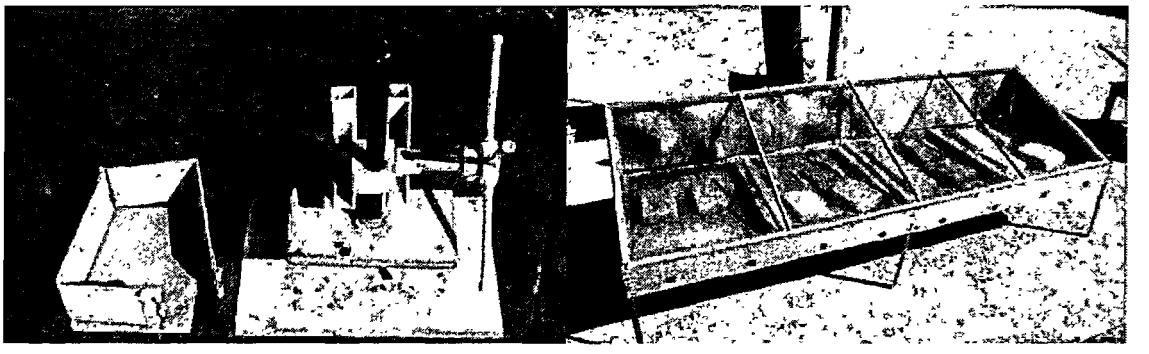

(घ) **दाब – मशीन** : बहुत ही कम लागत मे लकड़ी अथवा लोहे के साँचे में घटको को डालकार उपयुक्त आकार की लकड़ी की पट्टिका द्वारा दबाया जा सकता है पर इसके लिये लोहे की हस्त–चलित दाब मशीन विषेष लाभकारी रहती है।

(ड) **बट्टिका–उष्मक (ड्रायर)** : बट्टिका को सुखाने का सबसे सरल तरीका है, इनको सौर–उष्मक में सुखाया जा सकता है। विद्युत हाइब्रीड–सौर अथवा गैस–सौर हाइब्रीड उष्मक भी काम में लिया जा सकता है। विद्युत उष्मक (इलेकट्रिक ऑवन), ड्राप्ट–टाईप विद्युत उष्मक जिसमे गर्म वायु का संचरण पंखे द्वारा होता हो उत्तम रहता है।

(त) **पैकिंग करना** : सूखी हुई तैयार बट्टिका को छपे हुए रैपर की उपयुक्त नाप की नलिका में पैक कर दिया जाता है। अततः इसके दोनो छोरों को सिलिंग–मशीन द्वारा बन्द कर दिया जाता है।

बनाने की विधी

यहाँ पर बट्टिका बनाने की विस्तृत विधी दी गई है । घटकों की मात्रा अथवा इनके गुण–धर्मो में परिवर्तन होने पर निम्न वर्णीत विधी में भी थोड़े बदलाव की आवश्कता हो सकती है । यह विवरण एक साथ 10 बट्टिकाऐं बनाने के लिये है । यदि इससे कम व ज्यादा बट्टिकाओं का उत्पादन करना हो तो घटकों की मात्रा में उसी अनुपात में बदलाव की आवश्यकता होगी ।

10 बट्टिकाओं के एक बैच के लिये घटको की मात्रा व विधी निम्न होगी ।

(1) सर्वप्रथम 1 किलो ग्राम यूरीया–दाणों का 500 मि. ली. गर्म जल में घोल बना ले। इसके लिये कॉच अथवा इस्पात के पात्र ही काम में लेने चाहिये।

(2) एक बड़े प्लास्टिक टब में 10.0 किलो 400 ग्राम सीरे को ले तथा इसमें उपरोक्त विधी द्वारा तैयार यूरीया का घोल (1) अच्छी तरह से इस्पात के चम्मच की सहायता से मिलाये। यदि सीरा उपलब्ध न हो तो पशुओं के गुड की 8 किलो 500 ग्राम मात्रा को लोहे के पतीले में 3.0 लीटर पानी के साथ गर्म करके घोल बना ले तथा इसमें उपरोक्त बने यूरीया के घोल को अच्छी तरह से मिला लें।

(3) सीरा–यूरीया के उपरोक्त घोल (2) में कमष 1.0 किलो पीसा हुआ साधारण नमक, 1.0 किलो विटामीन–युक्त लवण–मिश्रण एवम् 1.0 किलो डोलोमाइट चूना (अथवा कैलसाइट) को

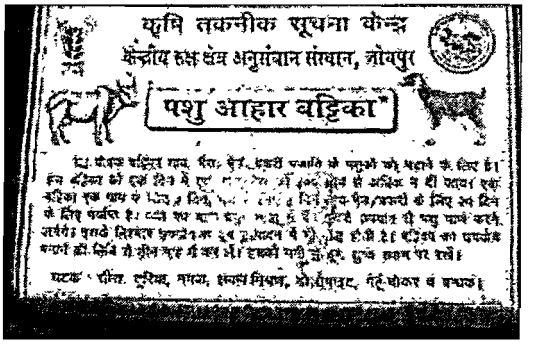

इस्पात के चम्मच से धीरे धीरे हिलाते रहें जब तक कि ये विभिन्न लवण, सीरा–यूरीया घोल (2) में अच्छी तरह से मिल न जाये।

(4) एक बड़े प्लास्टिक टब में 7.0 किलो 500 ग्राम गेहूँ की चापड ले तथा इसमे 1.0 किलो सोयाबीन–मील (सोयाबीन के बीजो से तेल निकालने के बाद बची दाल) को हाथ से अच्छी तरह से मिलाये। सोयबीन मील की जगह ग्वार की चूरी अथवा ग्वार–कोरमा काम मे लिया जा सकता है। इस चापड़ एवम् सोयाबीन मील (अथवा ग्वार–चूरी या कोरमा) मिश्रण में उपरोक्त प्राप्त सीरा–यूरीया–लवण मिश्रण इत्यादि (3) का घोल धीरे धीरे डाले व इसको अच्छी तरह से मिलाते रहे।

(5) अंत में 240 ग्राम ग्वार–गम डस्ट थोड़ी–थोड़ी मात्रा में उपरोक्त मिश्रण (4) पर छिड़कते रहे व मिश्रण को अच्छी तरह से मिलाते रहे।

(6) सबसे पहले बाहर की ओर खुलने वाले लोहे के सॉचे में अन्दर की ओर एक प्लास्टिक की तह बिछा दें। इससे 4.0 किलो 700 ग्राम, उपरोक्त बने मिश्रण (5) की मात्रा को लेकर हस्त–चलित मशीन द्वारा दबा दें।

(7) 24–घंटे इनको (6) साँचे में रहने दें तथा अततः शुष्मक में रख कर सूखा दें।

(8) सूखने के बाद कागज अथवा प्लास्टिक के रेपर, जिस पर बट्टिका के बारे में पूर्ण जानकारी छपी हो में पेक कर दें। 10–10 बट्टिकाओं को जूट के बने उपयुक्त साइज के बैग अथवा पेपर कार्टुन में पेक कर दें।

क्रम वार पौष्टिक पशु–आहार बनाने की विधि

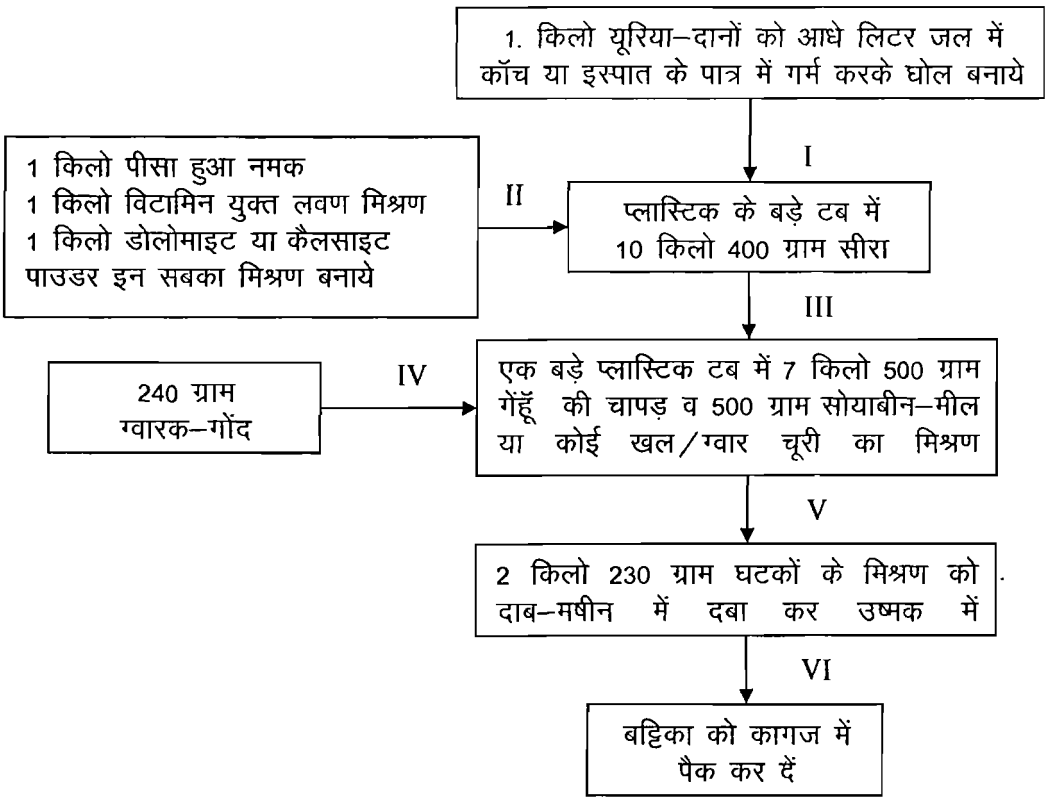

तालिका क्र. सख्यां 1: पशु आहार बट्टिका के मुख्य–घटक एवम् वैकल्पिक घटक जिनको मुख्य–घटको के स्थान पर उपयोग में लिया जा सकता है ।

क्र. संख्या	मुख्य एवम् उत्तम घटक'	वैकल्पिक अथवा प्रतिस्थापित घटक
1.	गन्ने का सीरा	चकून्दर का सीरा/पषु–आहार गुड, कोर्न–स्टीप लिकर (मक्की–स्टार्च उद्योग का उप–उत्पाद)
2.	यूरीया	–
3.	साधारण नमक	–
4.	डोलोमाइट	कैलसाइट/कम सिलीका का संगमरमर–पत्थर का चूरा
5.	अमीनो अम्ल एवम् विटामीन ए, डी, ई युक्त लवण मिश्रण	विटामीन ए युक्त लवण मिश्रण/कैलशियम एवम् फास्फोरस युक्त लवण मिश्रण।
6.	गेहूँ की चापड़	वसा युक्त या (और) वसा–विहीन चावल की चापड/जौ की चापड़ । माल्ट–स्प्राउट/नीम की पत्ती का चूरा/अरडु की पत्ती का चूरा/बीज–निकली विलायती बबूल फली का चूरा/बीज–निकली इजरायली बबूल की फली का चूरा/अच्छी तरह से कुतर किया गया धामण/घास बाजरी का चूरा व वसा–युक्त चावल की चापड़ का मिश्रण।
7.	सोयाबीन–मील	ग्वार–कोरमा/ग्वार–चूरी/अच्छे तिलहन बीजों की खल/कपास के बीजों का चूरा ।
8.	कार्बनिक–बन्धक (बाईन्डर): ग्वार–गौंद उद्योग का उत्पाद (ग्वार–गौंद डस्ट)	1. कार्बनिक बंधक : मैथी के बीजों का चूर्ण 2. अकार्बनिक–बंधक: सिमेन्ट/मैगनिषीयम आक्साइड/बेन्टोनाइट या सोडियम बेन्टोनेट/जिप्सम/अनबुझा चूना (कैलषियम आक्साइड) इत्यादि

जहाँ तक सम्भव हो उपरोक्त तालिका मे वर्णित "मुख्य एवम् उत्तम घटकों" को ही पशु आहार बट्टिका बनाने में प्रयोग करना चाहिये। पर यह सम्भव न हो तो वैकल्पिक अथवा प्रतिस्थापित घटकों में से कोई भी एक घटक काम में लिया जा सकता है । इस स्थिति में बनाने की विधी में वर्णित घटको की मात्रा में थोड़े बदलाव की आवश्कता हो सकती है।

हानि लाभ का लेखा–जोखा

किसी भी उद्योग में हानि–लाभ का लेखा–जोखा एक महत्वपूर्ण कार्य है । बट्टिका–उत्पादन कुटीर उद्योग में यह निम्न प्रकार लगाया जा सकता है ।

(अ) **परमानेन्ट असेट्स** : निम्न यंत्रों के खर्चो का योग

(1) लोहे के सॉचे मय लकड़ी की पट्टिकाएँ
(2) दाब–मशीन
(3) तराजू एवम् इसके विभिन्न तोल
(4) विभिन्न घटको के संचय के पात्र
(5) यूरीया व अन्य घटको के घोल व इनके मिश्रण बनाने के पात्र
(6) उष्मक : सौर अथवा विद्युत उष्मक
(7) सिलिंग अथवा पैकिंग करने के यंत्र

(ब) **कन्जूमेबलस्** : कुटीर उद्योग में बट्टिका बनाने का मुख्य खर्च घटको की खरीद पर लगता है । यह प्रत्येक घटक की मात्रा एवम् उनके बाजार मूल्य पर निर्भर रहता है। उपरोक्त वर्णित काजरी द्वारा विकसित सरल–विधी द्वारा पशु आहार बट्टिका बनाने का उद्योग स्थापित करने का विस्तृत विवरण दिया गया है । कुटीर उद्योग में यंत्रों व मशीनों का उपयोग बहुत कम होता है । अतः इसमें मुख्य लागत, पारश्रमिक व घटकों की खरीद में होने वाला खर्च है तथा श्रमिकों का पारश्रमिक ही मुख्य लाभ गिना जाता है । इस प्रकार के व्यवसाय ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार उपलब्ध करवाने के अच्छे उपाय हो सकते है ।

पौष्टिक पशु–आहार बट्टिका के बारे में अधिक जानकारी एवम् इसको बनाने का विस्तृत प्रशिक्षण प्राप्त करने हेतु : विभागाध्यक्ष, पशु उत्पादन एवम् चारागाह प्रबन्धन प्रभाग या **निदेशक, केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान, जोधपुर से सम्पर्क कर सकते है ।**

काजरी पशु-पौष्टिक दाणा: मरूस्थलीय पशुओं के लिए वरदान

डा. एच. सी. बोहरा
पशु–पोषण प्रयोगशाला
केन्द्रिय रूक्ष क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर 342 003

काजरी पशु–पौष्टिक दाणा, स्थानीय उपलब्ध पशु–पोषक घटकों जैसे उच्च कीण्णीय–शर्करा तथा वनस्पति प्रोटीन, अप्रोटीन नत्रजन, खनिज लवण एवम् विटामिनों का संतुलित मिश्रण है। केन्द्रिय रूक्ष क्षेत्र अनुसंधान संस्थान ने इसको बनाने की सरल तकनिक विकसित की है जिसमें गन्ने का सीरा, ग्वार–कोरमा, गेहुँ की चापड़, विटामिन युक्त लवण मिश्रण, नमक एवम् डोलोमाइट चूना–पत्थर को उपयुक्त मात्रा में संमिश्रित कर सौर–ताप अथवा सौर–उष्मक द्वारा सूखा लिया जाता है। इस प्रकार तैयार किये गये दाणें मे सीरा द्वारा गेहूँ की चापड़ एवम् ग्वार कोरमा पर अन्य पोषक घटक अच्छी तरह से लेपित होने के कारण, दाणें के प्रत्येक भाग में सभी पोषक तत्व समान मात्रा विद्यमान रहते है। इस पौष्टिक दाणें को मरू ग्रामीण जन अथवा कृषक आसानी से उत्पादन कर रोजगारोन्मुख व्यवयाय की तरह अपना सकते है। काजरी संस्थान द्वारा पौष्टिक दाणे का ग्रामीण पशुओं पर किये गये प्रयोगों के उत्साहवर्धक परिमाण प्राप्त हुए है। इनके उत्पादन की सरल–तकनीक के कारण यह पौष्टिक दाणा मरू–पशु–पालकों में बहुत लोकप्रिय हो रहा है तथा ग्रामीण किसान इसके उत्पादन को व्यवसाय स्वरूप अपना रहें है।

राजस्थान के कुल भौगोलिक क्षेत्र का लगभग 62 प्रतिशत भू–भाग (12 पश्चिमी जिले) शुष्क मरूस्थलीय क्षेत्र है। शुष्कता एवम् न्यून वर्षा के कारण इस क्षेत्र के ग्रामीण कृषको का मुख्य व्यवसाय एवम् आय का स्त्रोत कृषि एवम् पशु–पालन आधारित कृषि है। सीमित एवम् असमय वर्षा के कारण इस क्षेत्र में कृषि उत्पादन प्रभावित होता रहता है। हॉलाकि इस क्षेत्र में पड़त एवम् चारागाहों का विस्ततृ क्षेत्र है, जो कि पशुओं को चराई के लिए उपलब्ध रहता है पर कम वर्षा के कारण जो भी पशु खाद्य उपलब्ध रहता है वे न केवल मात्रा वरन् गुणवत्ता में भी निम्नतर होते है। इस समस्या को उच्च पशु दर और बदतर कर देती है। ऐसी अवस्था में पशुओं को न केवल आवश्यकतानुरूप चारा उपलब्ध हो पाता है वरन् इसकी निम्न पोषकता के कारण पशुओं में पौषक तत्वों की लगातार कमी बनी रहती है जिससे पशु–स्वास्थ्य एवमं उत्पादन प्रभावित होता है।

हॉलाकि मरू चारागाहों में पाले जाने वाले पशुओं में लगभग सभी मुख्य पोषक घटको की कमी रहती है जिसमें कीण्णीय शर्करा, प्रोटीन, विटामीन ए एवम् ई, तथा विभिन्न लवणों की निम्नता मुख्य समस्या है।

अतः मरूस्थलीय पशुओं के लिए ऐसे पौष्टिक–दाणें की आवश्यकता होती है जिसमें सभी आवश्यक पोषक–तत्वों के साथ–साथ उच्च किवणीय शर्करा का समावेश हो। काजरी संस्थान ने उपरोक्त सभी बिन्दुओं को ध्यान में रखकर इस प्रकार का पोष्टिक–दाणा बनाने की विधि विकसीत की है जिसमे सब घटक एकाकार होते है। इस प्रकार के दाणें के उत्पादन के लिए कोई विशेष यंत्र की आवश्यकता नहीं होती है। इसके उत्पादन एवम् विभिन्न घटंकों का विवरणः

1. किवणीय उर्जा अथवा शर्करा के स्त्रोतः मुख्यतया गन्ने का सीरा (मॉलासेज) ही काम में लेना चाहिये। इसकी अनुपलब्धता की स्थिति में चकून्दर का सीरा, अथवा गहरे–भूरे रंग का काला गुड़ (रसकट) भी काम में लिया जा सकता है।

2. नत्रजन के स्त्रोतः (2.क.) वनस्पतिक प्रोटिनः ग्वार–कोरमा अथवा ग्वार चूरी, सोयाबीन–खल या अन्य कोई भी अच्छी तिलहन फसलों की खल उपयोग में ली जा सकती है। (2.ख.) यूरीया जो कि पशु के रूमन (औदरी) मे विद्यमान लाभदायक सूक्ष्मजीवियों द्वारा उच्च कोटि के सूक्ष्म जीवी–प्रोटीन में बदल जाता है जो कि अततः पशु की आहार नाल में पचकर अवषोशित हो जाता है।
3. लवणों के स्त्रोतः (3. अ.) पीसा हुआ साधारण नमक आयोडिन युक्त नमक की आवश्यकता नही होती क्योंकि लवण–मिश्रण में आयोडिन आवश्यक मात्रा में उपयलब्ध रहता है। सोडियम सल्फेट युक्त नमक, जो कि कम दाम में मिलता है, यदि उपलब्ध हो तो काम में लिया जा सकता है। (3.ब.) डोलोमाइट–चूनाः यह कैलशियम एवम् मैगनिशीयम कार्बोनेटों का यौगिक है तथा दोनो तत्वों का अच्छा स्त्रोत है। (3. स.) लवण–मिश्रणः विटामिन युक्त लवण–मिश्रण जिसमें सब मुख्य एवम् सूक्ष्म आवश्यक खनिज तत्वों जैसे कैल्शियम, फ़ास्फोरस कोबाल्ट, ताम्बा, आयोडिन, लौहा, मैगनिज, सैलिनियम एवम् जस्ता इत्यादि तथा विटामिन ए, डी–3, ई, नियासिनेमाइड का समावेश हो उपयोग में लिया जाना चाहिये। यदि इस प्रकार का लवण मिश्रण उपलब्ध न हो तो साधारण लवण–मिश्रण में विटामिन ए की उपयुक्त मात्रा मिश्रीत कर उपयोग में लिया जा सकता है। लवण–मिश्रण की अनुपलब्धता की अवस्था में उच्च कोटि के डाई–कैल्शियम फास्फेट (डी सी पी) तथा जल–विलनीय 1 लाख अन्तराष्ट्रीय इकाई। प्रति मि॰ ली॰ के विटामिन ए के घोल को लगभग 60 मि॰ ली॰ मात्रा को 1 किलो ग्राम साधारण नमक का समिश्रण बनाकर उपयोग में लिया जा सकता है।
4. संरचनीय घटकः गेहूँ का चोकर, पौष्टिक दाणा बनाने के लिए उत्तम रहता है। यह न केवल दाणे के अन्य घटको को आधार प्रदान करता है, पर यह विलयशील कार्बोहाइड्रेट एवम् बी समूह के विटामिनों का मुख्य स्त्रोत है। इसकी अनुपलब्धा की अवस्था में चावल की चोकर, मक्का–ग्लूटन–फीड या अन्य इसी प्रकार के पदार्थ जैसे मूगफली की फली का चूरा भी काम में लिया जा सकता है।

   हालॉकि उपरोक्त वर्णित पशु–पोषक घटकों द्वारा पौष्टिक दाणों का उत्पादन उत्तम रहता है पर किसी क्षेत्र में इनकी अनुपलब्धा की अवस्था में इन घटको को उसी प्रकार के अन्य पशु–खाद्य पदार्थो द्वारा विस्तापित किया जा सकता है।

यंत्र

काजरी द्वारा विकसीत पौष्टिक दाणा बनाने के लिए कोई विषेश यंत्र की आवष्यकता नहीं होती है केवल तुला, दाणे को सुखाने के लिए छत पर फैलाने के लिए प्लाष्टिक की चद्दर तथा घटकों के भण्डारण एवम् मिश्रण तैयार करने के लिए विभिन्न प्लाष्टिक तथा लोहे के टब इत्यादि की आवश्यकता होती है। यदि सौर–उष्मक, विषेशकर विद्युत–सौर–उष्मक उपलब्ध हो तो दाणे को सुखाने मे सुघमता रहती है।

बनाने की विधी

एक बार मे 100 किलो ग्राम पौष्टिक दाणा बनाने के लिए सर्व–प्रथम (अ) 1 कि. ग्रा. दाणेदार यूरीया का लगभग 0.500 मि. मी. गर्म जल में घोल तैयार करे तथा 47.00 कि. ग्रा. सीरा (मेलासैज) मे मिलाये। (ब) अलग से 5.0 कि. ग्रा. साधारण नमक 5.0 कि. ग्रा. विटामीन लवण–मिश्रण एवं 5.0 कि. ग्रा. डोलोमाइट पाउडर, इन सब को अच्छी तरह से मिलाये। (स) अब

सीरा–यूरीया (अ) के घोल में सब लवणों के मिश्रण (ब) को अच्छी तरह से मिलोये। (द) अलग से 32.00 कि. ग्रा. गेहूँ के चोकर तथा 5.0 कि. ग्रा ग्वार चूरी अथवा खली को अच्छी तरह से मिलाये। इस मिश्रण (द) में यूरिया–सीरा–लवणों का बना गाढा घोल डाल दें तथा हाथ द्वारा अच्छी तरह से मिलाये जिससे गेहूँ के चोकर एवम् ग्वार–चूरी के मिश्रण पर अन्य पोषक घटकों का अवलेपन हो जाय। इस प्रकार बने मिश्रण को खुली धूप में प्लास्टिक की चद्दर फैलाकर उस पर सूखाने के लिए रख दे तथा सूखने तक सुबह–शाम एक–एक बार अच्छी तरह से मिलाते रहे जिससे पौष्टिक दाणा सूखने के बाद बड़े–बड़े दाणे के रूप में न रह कर छोटे–छोटे दाणों के रूप में प्राप्त हो। इस प्रकार तैयार पौष्टिक दाणें को 100–100 ग्राम प्रतिदिन एक बकरी अथवा भेड को देने के लिए तथा 150–150 ग्राम सुबह–शाम गाय अथवा भैंस को इनके चारे/बॉटे में मिलाकर देने के लिए जल–रोधी प्लास्टिक के पैकेट में पैक कर दें।

क्रम वार काजरी पशु–पौष्टिक दाणा बनाने की विधि (कुल मात्राः 100 कि० ग्रा०)

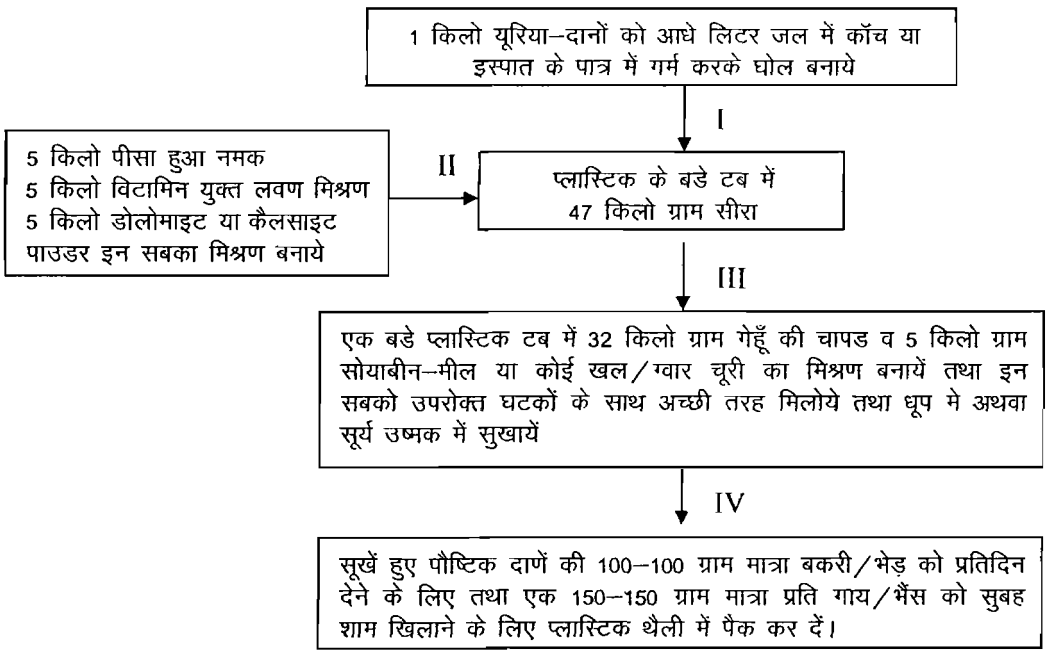

काजरी संस्थान ने इस प्रकार के पशु–पौष्टिक दाणों पर पशु–पालकों तथा संस्थान के पशुओं पर विस्तृत वैज्ञानिक शोध के आधार पर पाया कि काजरी पशु–आहार बट्टिका की तरह, इसके सेवन से पशुओं में भूख जागृत होना तथा पानी का सेवन ज्यादा करना, जुगाली में सुधार, लवणों की कमी से पशुओं में होने वाली पाइका नामक व्याधी से मुक्ति तथा स्वास्थ्य तथा दूध उत्पादन में अभूतपूर्व सुधार दर्ज किये गये। भेड़ एवम् बकरिया पर अलग–अलग स्थान पर किये गये प्रयोगों द्वारा यह देखा गया कि केवल 100 से 150 ग्राम पौष्टिक दाणा प्रतिदिन उन बकरी अथवा भेड़ जो केवल मरू–चारागाहों पर निर्भर है, उनको खिलाने से उनमें न केवल दैनिक दूध–उत्पादन में आशातीत वृद्धि ऑकी गई पर प्रति–ब्यात, तथा कुल ब्यात–काल में भी दुध उत्पादन में बढोतरी दर्ज की गई। जिनकी माताओं के मरू पौष्टिक दाणा पूरक आहार के रूप में दिया गया उनके मेमनो में दैनिक भार– वृद्धि एवम् तोल में भी उत्साह वर्धक वृद्धि आंकी गई।

दैनिक भार–वृद्धि दर तथा तोल मे। भी उन मेमनो मे उत्साह वर्धक वृद्धि आंकी गई जिनकी माताओं को मरू पौष्टिक दाणा पूरक आहार में दिया गया से ज्यादा पाया गया जिनकी माताओं को दाणा–पूरक–आहार के रूप में नहीं दिया गया है।

यह पौष्टिक दाणा हर प्रकार के पशु, दूधारू एवम् ग्याभित, विशेषकर गर्भावस्था के अन्तिम महीनों में देना अतिलाभकारी रहता है। इस दाणें में उन सभी पोषक घटको का उचित मात्रा तथा अनुपात में समावेष किया गया है, जिससे पशुओं को पूरक आहार के रूप में देने पर इनमें आवष्यक पोषक तत्वों की आपुर्ति कर उनके स्वास्थ्य में सुधार एवम् उत्पादन में आषातीत वृद्धिकर पशु पालको को पशु–पालन को लाभद्रायक व्यवसाय बनाता है।

इस प्रकार तैयार किया गया शुष्क, मरू पशु–पौष्टिक दाणे का न केवल उत्पादन भी सरल है पर उच्च शर्करा व नमक के कारण भण्डारण भी सुगम है। इस प्रकार के पशु–दाणे का उपयोग कर न केवल पशुओं के स्वास्थ्य वरन् उत्पादन में भी आषातीत लाभ प्राप्त किया जा सकता है। साथ ही साथ ग्रामीण क्षेत्र में इसका उत्पादन कर रोजगारोन्मुख व्यवसाय अपना सकते है।

काजरी मरू–पशु–पौष्टिक दाणे बनाने की तकनीक की विस्तृत जानकारी प्राप्त करने हेतु विभागाध्यक्ष, पशु उत्पादन एवम् चारागाह प्रभाग, तथा निदेषक, केन्द्रिय रूक्ष क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर– 342003 से सम्पर्क कर सकते है।

लवण मिश्रण पोषक से मरू क्षेत्र में पशुओं को स्वस्थ कर अधिक उत्पादन लें

डॉ. बी.के. माथुर

केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर – 342 003

राज़स्थान का मरूस्थलीय क्षेत्र खेती के लिये अधिक उपयुक्त नहीं है। यहाँ की भूमि रेतीली है, जिससे पानी कम समय में वाष्प बनकर उड जाता है। इस कारण यहॉ फसलें पैदा करने में परेशानी होती है। इसलिये राजस्थान में पशुपालन का विशेष महत्व है।

पशु उत्पादन में पशु पोषण का विशेष महत्व है। पशुपालन में कुल खर्चे का 70 प्रतिश्त पशु की खिलाई पर होता है। अतः पशुओं को सदैव आवश्यकतानुसार संतुलित पोषक उपलब्ध होना चाहिये जिससे वह लगातार उत्पादन दे सकें। पूर्ण व संतुलित पोषण के अभाव में यह पशु अपने अनुवांशिक क्षमता के अनुसार उत्पादन नहीं कर सकते है। प्रयोगों द्वारा यह देखा गया है कि यदि यहाँ के पशुओं को पूर्ण आवश्कयतानुसार पोषण दिया जाये तो इन पशुओं के उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है व स्वस्थ रखा जा सकता है।

मूल पोषक तत्व :–

1. शर्करा
2. प्रोटीन
3. वसा
4. लवण
5. विटामिनस्

ऊपर लिखे पॉच मूल पोषक तत्व है व इन सबके शारिरीक उपयोग व पाचन के लिये जल अतिआवश्यक होता है। यहाँ पर हम पशुओं के लिये भिन्न–भिन्न लवण की आवश्कयता पर प्रकाश डालेंगे। यह देखा गया है कि कम से कम सोलह (16) लवण तत्व पशु पोषक में अतिआवश्यक है।

इन तत्वों को प्रतिदिन पोषण में मात्रा कि आवश्यकतानुसार दो भागों में बॉटा गया है।

अ. लवण तत्व जो कि ज्यादा मात्रा में प्रतिदिन आवश्यक होते है (ग्राम gms)।

फॉस्फोरस
सोडियम
मैंग्निशियम
क्लोराइड
पोटेशियम

ब. लवण तत्व जो कि तुलानात्मक रूप से उपरोक्त तत्वों से कम मात्रा मे प्रतिदिन आवश्यक होते है (मिलीग्राम/माइक्रोग्राम Mg/μg)।

कॉपर
कोबाल्ट

जिंक
आयोडिन
आयरन
मैंग्निज
मोलिब्डिनम
सैलिनियम
क्रोमियम
नाइट्रेट
सल्फर
टिन
वेनेडियम
फ्लोरिन इत्यादि।

वैसे कुल 40 लवण तत्व पशु एवं पादप कोशिकाओं में पाये गये हैं। ऊपर लिखे लवण तत्वों में से क्षेत्र कि आवश्यकतानुसार लवणों को मिला कर लवण मिश्रण बनाया जाता है। काजरी में शोध कार्य से मालूम चला है कि मरू क्षेत्र के पशुओं में कैल्शियम, फॉस्फोरस, कोबाल्ट, मैंग्निजियम, कॉपर इत्यादि की कमी है वहीं आयरन व जिंक की मात्रा पशु के रक्त में आवश्यकता से अधिक है। अतः पशु के शरीर में लवण तत्वों का संतुलन बिगड़ा हुआ है जिससे पशु में अनेकानेक प्रकार के रोक हो जाते है, बढ़वार व उत्पादन में कमी हो जाती है। इन सब बातों को ध्यान में रख कर काजरी मरूक्षेत्र आवश्यकतानुसार लवण मिश्रण का उत्पादन करने जा रही है जो निकट भविष्य में उपलब्ध होगा।

लवण मिश्रण (मिनरल मिक्सचर) खिलाने के फायदे :–

1. पशु समय पर गर्मी में आ जाता है तथा ग्याभ ठहरने की सम्भावना अत्यधिक रहती है।
2. पशु ब्याने के पहले दिन से ही लगातार दूध देता है वह निरंतर दुग्ध उत्पादन में वृद्धि होती है व पशु जल्दी सूखता नहीं है।
3. इससे अन्य रोगों के जीवाणुओं से लड़ने की क्षमता अधिक हो जाती है।
4. पशु अखाद्य वस्तुऐं जैसे – मिट्टी, दीवार, जूते, पॉलिथिन इत्यादि नहीं खाता।
5. इससे हड्डियाँ छोट–बड़ी व मुड़ती नहीं है।
6. बछड़े–बछड़ियों में ज्यादा बढ़वार होती है।
7. भेड़ों से अधिक ऊन व मुर्गी से अधिक अण्डे मिलते है।
8. मिनरल मिक्सचर से कुल मिलाकर पशु स्वस्थ रहता है।
9- ग्याभिन पशु आराम से प्रवश करता है, जर समय पर गिर जाती है व पहले दिन से दूध अधिक मात्रा में मिल जाता है – पशुपालक इस प्रकार कई प्रकार की परेशानियों से बच जाता है। अतः अधिक मुनाफा कमाता है।

काजरी लवण-बट्टिका का उपयोग कर मरुस्थल में पशुओं से ज्यादा उत्पादन प्राप्त करें

डा. एच. सी. बोहरा
पशु–पोषण प्रयोगशाला, पशुविज्ञान एंव चारा उत्पादन विभाग
केन्द्रिय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर – 342003

राजस्थान के कुल भौगोलिक क्षेत्र का लगभग 62% भू–भाग (12 पश्चिमी जिले) शुष्क मरूस्थलीय क्षेत्र है। शुष्कता एवम् न्यून वर्षा के कारण इस क्षेत्र के ग्रामीण कृषको का मुख्य व्यवसाय एवम् आय का स्त्रोत कृषि एवम् पशु–पालन आधारित कृषि है। सीमित एवम् असमय वर्षा के कारण इस क्षेत्र में कृषि उत्पादन प्रभावित होता रहता है। हॉलाकि इस क्षेत्र में पड़त एवम् चारागाहों का विस्ततृ क्षेत्र है, जो कि पशुओं को चराई के लिए उपलब्ध रहता है पर कम वर्षा के कारण जो भी पशु खाद्य उपलब्ध रहता है वे न केवल मात्रा वरन् गुणवत्ता में भी निम्नतर होते है। इस समस्या को उच्च पशु दर और बदतर कर देती है। ऐसी अवस्था में पशुओं को न केवल आवश्यकतानुरूप चारा उपलब्ध हो पाता है वरन् इसके निम्न पोषकता के कारण पशुओं में पौषक तत्वों की लगातार कमी बनी रहती है जिससे पशु–उत्पादन प्रभावित होता है।

हाँलाकि मरू चारागाहों में पाले जाने वाले पशुओं में लगभग सभी मुख्य पोषक घटको की कमी रहती है जिसमें की कीण्णीय शर्करा, प्रोटीन, विटामीन ए एवम् ई, तथा विभिन्न लवणों की निम्नता मुख्य समस्या है। ऐसा देखा गया है कि पशु–चारे में फास्फोरस की कमी तथा कैलशीयम–फास्फोरस लवणों का उचित अनुपात में न पाये जाने के कारण पशु ''पाइका'' नामक व्याधी से ग्रसीत हो जाते है। इस अवस्था मे पशु बार–बार जमीन, दिवार, जूते, कपड़े, चमड़ा, मल–मूत्र इत्यादि में मुहँ डालता है। हरे चारे की कमी के कारण पशुओं को भूख कम लगती है तथा रात्रि–अन्धता व प्रजनन क्रिया प्रभावित होती है। अतः मरूस्थलीय पशुओं को ऐसे लवण–बट्टिका की आवश्यकता होती है जिसमें सभी लवणो के साथ–साथ विटामीन ए, डी एवम् ई का भी समावेश हो।

प्रकृति में पाये जाने वाले अनेक लवणों में से 16 लवण तत्वों को पशुओं के स्वास्थ्य एवम् उचित उत्पादन के लिए आवश्यक माना गया है। जिसमें 7 मुख्य (सोडियम, पोटेशियम, क्लोराइड, कैलशियम) जो कि 0.04 से 1.5 प्रतिशत तथा 9 सूक्ष्म–लवणों (लौह, ताम्र, जस्ता, मैंगनिज, आयोडिन, कोबाल्ट, मोलिबडिनम, सैलिनियम एवम् क्रोमियम) जो मुख्यता 0.08–0.50 मि॰ ग्रा॰ प्रतिशत (केवल लौह तथा जस्ता 10–80 मि॰ ग्रा॰ प्रतिशत) मात्रा में पशुओं में पाये जाते है। सोडियम, पोटेशियम तथा क्लोरीन द्रवीय–दाब तथा अम्लीय–क्षारीयता संतुलिन में विशेष उपयोगी है। कैलशियम तथा फास्फोरस की हड्डीयों एवम् दाँतो के निमार्ण तथा गंधक की संरचनीय प्रोटीन निमार्ण के लिए विशेष आवश्यक है। मैगनिशियम शारीरिक विद्युत–रासायनिक क्रियाओं तथा जैव–रसायनिक क्रियाओं में उत्प्रेरक के साथ–साथ जैव–संरचना का मुख्य अवयव है। लौह तत्व, रक्त में पाये जाने वाले हीमोग्लोबिन का मुख्य घटक है जो कि शरीर में आक्सीजन का वाहन करता है। कोबाल्ट विटामिन बी–12 का मुख्य घटक है, जो कि रक्त कणिकाओं के सुदृढ़ संगठन के लिए अति आवश्यक है तो आयोडिन थाइरोक्सिन

नामक हार्मोन का मुख्य घटक है, जिसकी कमी से पशुओ में "गोइटर" नामक व्याधि तथा प्रजनन क्रिया प्रभावित होती है।

हालॉकि उपरोक्त वर्णित लवण पशु को भोजन द्वारा उचित मात्रा में उपलब्ध होने चाहिये वरना वह पशु व्याधि–ग्रसित हो जाता है तथा उत्पादन घट जाता है पर इन लवणो की भोजन में प्रचुरता भी पशुओं के लिए लाभ की बजाय हानि पहुचाँ सकती है। जैसे कैलशियम एवम् मोलिबडीनम् की प्रचुरता दूसरे तत्वों के शोषण एवम् उपयोग को प्रभावित करती है। इसी प्रकार कैलशियम एवम् फास्फोरस का अनुपात 2:1 से अधिक नहीं होना चाहिये। ताम्र की भोजन में अधिक मात्रा होने पर यह पशु के शरीर मे संचय हो जाता है जिससे पशु "ताम्र व्याधि" से ग्रसित हो जाता है। इसी प्रकार सैलिनियम, मॉलिबडिनम, क्रोमियम तथा फ्लोरीन की ज्यादा मात्रा भी पशुओं में हानि पहुचाँ सकती है।

अतः पशुओं में उनके स्वास्थ्य एवम् सूचारू उत्पादन के लिए उपरोक्त वर्णित लवणों को पशु–आहार द्वारा आवश्यक मात्रा तथा उचित अनुपात में देना आवश्यक हैं। केन्द्रिय रूक्ष क्षेत्र अनुसंधान संस्थान जोधपुर ने दो प्रकार की पशु–लवण बट्टिकाऐं बनाने की तकनीक विकसित की है। इस प्रकार की बट्टिकाऐं मरू–पशुओं के लिए विषेश लाभकारी हो रही है। इनमें आवश्यक लवणों के साथ–साथ विटामिनों का भी उचित मात्रा में समावेश किया गया है। बट्टिका बनाने की विधी बहुत सरल है। बेरोजगार एवम् ग्रामीण–जनों के लिए इनका उत्पादन रोजगार का साधन बन सकता है। इस प्रकार की लवण–बट्टिकाऐं ठाण तथा चारागाहों पर निर्भर, दोनो प्रकार के पशुओं के लिए उपयोगी हैं।

इस संस्थान ने दो–प्रकार की लवण–बट्टिकाऐं बनाने की विधी विकसीत की है। प्रथम प्रकार की बट्टिका बनाने के लिए "हस्त–दाब", व दूसरे प्रकार की बट्टिका, विद्युत अथवा डिजल–इंजन चलित दाब मशीन का उपयोग कर बनाई जा सकती है।

(I) सर्व–प्रथम 1.0 किलो पीसा हुआ साधारण नमक (इसके लिए आयोडिन युक्त नमक की आवश्यकता नहीं है, क्योकि आयोडिन, निम्न वर्णित लवण–मिश्रण में विद्यमान रहता है) मे 0.5 किलो विटामिन युक्त लवण मिश्रण (यदि लवण–बट्टिका हरे चारे उत्पादित क्षेत्रों के लिए बनानी हो तो विटामिन (ए, डी, ई) युक्त लवण मिश्रण की आवष्यकता नहीं है, पर जिन क्षेत्रों में पशुओं को हरा चारा उपलब्ध नहीं है, उनके लिए इन विटामिनों युक्त लवण–मिश्रण उपयोग में ले। लवण मिश्रण जितना महीन हो उतना उत्तम समझा जाता है तथा इसमें 0.5 किलो मक्की के आटे को अच्छी तरह से मिलाये तथा इन सबको बाद मे लगभग 650 ग्राम गन्ने के सीरे (मौलासेज) के साथ मिलाये। इस पर 25 ग्राम ग्वार–गोंद उद्योग का निष्क्रिय पाउडर अच्छी तरह से मिलाये, अन्तत् हस्त–चालित दाब मषीन द्वारा अच्छी तरह से दबा दें। इसको तेज धूप अथवा सौर–उष्मक में सूखा दें। इस प्रकार बनाई गई बट्टिका का शुष्क भार लगभग 2.50 किलो होता है। इसको पत्थर अथवा सीमेंट के बने सॉचों में रख कर पशुओं को चटाने के लिए रखा जा सकता है।

(II) 2.0 किलो साधारण नमक, 1 किलो विटामिन युक्त लवण–मिश्रण तथा 1 किलो डोलोमाइट–चूना पाउडर को अच्छी तरह से मिला ले। अलग से 1.0 किलो सीरे में 50 ग्राम यूरीया का 50 मि॰ली॰ जल में बना घोल अच्छी तरह सें मिलाये। इस यूरीया–सीरे के घोल में नमक–लवण–डोलोमाइट का मिश्रण अच्छी तरह से मिलाये तथा इसी मिश्रण में बाद में 25 ग्राम ग्वार–गोंद उद्योग का उप–उत्पाद को

मिलायें। उपरोक्त सब वस्तुओं को अच्छी तरह मिलाने के बाद डिजल अथवा विद्युत–चलित दाब मशीन द्वारा इसकी बट्टिका बना दें। इस प्रकार बनाई गई बट्टिका का शुष्क–भार लगभग 5.0 किलो तथा 1.0 प्रतिशत यूरीया की मात्रा का समावेश होता है जो कि सीरे की कीवणीय–षर्करा की उपस्थिति में पशुओं के रूमन (ओदरी) में विद्यमान लाभकारी सूक्ष्म जीवो द्वारा सूक्ष्म–जीव–प्रोटीन में बदल दिया जाता है जो अन्तत् पशुओं के पाचन नाल मे अवशोषित हो जाता है। लवण–मिश्रण, लवण बट्टिकाओं का मुख्य एवम् महत्वपूर्ण घटक है। भारतीय मानक संस्थान ने राष्ट्र व्यापी शोध कर दो प्रकार के लवण–मिश्रण का संघठन सुझााये है जो कि तालिका संख्या 1 में वर्णित हैं पर मरू क्षेत्र के पशुओं के लिए लवण बट्टिकाऐं बनाने के लिए 6,25,000 अन्तराष्ट्रीय इकाई (अ॰ ई॰), विटामिन ए 6250 अ॰, ई॰ विटामिन डी–3, 250 अ॰ ई॰ विटामिन ई तथा 1 ग्राम नियासीनेमाइड प्रति किलो ग्राम के हिसाब से लवण मिश्रण में समावेश करना विशेष लाभकारी रहता है।

तालिका संख्या 1. भारतीय मानक संस्थान द्वारा सुझाये गये लवण–मिश्रणों के घटको की मात्रा (प्रतिशत)

क्र॰ संख्या	घटक	प्रथम प्रकार (साधारण नमक युक्त)	द्वितीय प्रकार (साधारण नमक)*
1.	आद्रता	< 5.0	< 5.0
2.	साधारण नमक, बिना आयोडिन	> 22.0	–
3.	कैलशिम	> 18.0	> 23.0
4.	फास्फोरस	> 9.0	> 12.0
5.	मैगनिशियम	> 5.0	> 6.5
6.	लौह	> 0.4	> 0.5
7.	आयोडिन	> 0.02	> 0.026
8.	ताम्र	> 0.06	> 0.077
8.	मैंगनिज	> 0.1	> 0.12
9.	कोबाल्ट	> 0.009	> 0.012
10.	फ्लोरिन	> 0.05	> 0.07
11.	जस्त	> 0.3	> 0.38
12.	गंधक	> 0.4	> 0.5
13.	अम्ल–अघुलनीय राख	< 3.0	< 2.5

* 2 किलो लवण–मिश्रण में 1 किलो साधारण नमक मिलाकर, 100 किलो पशु–दाणें में मिलाया जा सकता है।

इस प्रकार बनाई गई बट्टिका किसी भी प्रकार के पशु, दूधारू एवम् ग्याभित, विशेषकर गर्भावस्था के अन्तिम महिनों में, पशु के लिए अति लाभकारी होती है। इन लवण–बट्टिकाओं में उपरोक्त वर्णित लवणों एवम् विटामिनों का उचित अनुपात मे समावेश किया गया है। अतः इनका उपयोग मरू–पशुओं मे आवश्यक लवणों की आपुर्ति करने के लिए उपयोग में लेकर इनमें लवणों की कमी एवम्

इनकी असंतुलता को दूर किया जा सकता है जिससे इनके स्वास्थ्य में सुधार एवम् उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है।

काजरी लवण–बट्टिका बनाने की तकनीक की विस्तृत जानकारी प्राप्त करने हेतुः विभागाध्यक्ष, पशु उत्पादन एवम् चारागाह प्रभाग या निदेशक, केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर – 342003 से सम्पर्क कर सकते है।

काजरी संस्थान की पशु-आहार बट्टिका स्वरोजगार में सक्षम

डॉ. पी.पी. रोहिल्ला
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान
क्षेत्रिय अनुसंधान संस्थान, पाली–मारवाड़ – 306 401

वर्ष 2002 में भारतवर्ष के अधिकतर हिस्से में भयंकर सूखा पडा जिसके कारण खाद्यान्न उत्पादन 240 लाख टन गिर गया (सामान्य से 12 प्रतिषत कम)। पश्चिमी राजस्थान में इसका प्रभाव अधिकतम था क्योंकि वर्षा सामान्य से 69 प्रतिषत कम हुई थी। सूखे का दुष्प्रभाव इस क्षेत्र के पषुधन पर सर्वाधिक पड़। चारे और पानी की उपलब्धता बहुत ही कम हो गई, बहुत से कृषकों व पशुपालकों को अपने अनुत्पादक पशुओं को मजबूर होकर भगवान भरोसे छोड़ना पड़ा, फलस्वरूप भूखमरी के कारण पशु काल का ग्रास बन गये। सूखे के कारण खरीफ फसलें खराब हो गई थी अतः पशुपालन ही सीमित आय का आधार रह गया था। दूध व अन्य पशु उत्पादों की बिक्री कर लोगों ने अपना गुजर–बसर किया लेकिन इस दौरान कुल आमदनी में भारी कमी (12 से 46 प्रतिशत तक) आ गई (सन्दर्भः पश्चिमी राजस्थान में सूखा, 2005, काजरी)।

पश्चिमी राजस्थान में पशु आहार प्रबंधन एक बहुत ही चुनौतीपूर्ण कार्य है। शुष्क क्षेत्र में लगातार भयंकर अकला व सूखे के कारण हरे चारे व आहार की अनुपलब्धता के फलस्वरूप पशुओं का स्वास्थ्य कमजोर रहता है व दुग्ध उत्पादन कम होता है। इन परिस्थितियों में हमारे संस्थान (***केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान*** संक्षेप में ***काजरी***) ने कृषि विज्ञान केन्द्र, पाली के माध्यम से **"सूखे से लड़ने की रणनीति"** के अन्तर्गत 'पशुओं के लिए संतुलित आहार' व 'उपलब्ध चरागाहों का सुधार' इत्यादि विषय पर बहुत से प्रदर्शनों, किसा गेष्ठियों एवं प्रषिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया।

संस्थान की तकनीक पशु आहार बट्टिका :

शुष्क क्षेत्रों में पशु आहार व चारे की कमी को ध्यान में रखते हुए हमारे संस्थान ने पशुधन के लिये बहुपौषक तत्व आहार बट्टिका (एम.एन.एफ.बी.) व पौषक तत्व मिश्रण का विकास किया। इस बट्टिका या मिश्रण को खिलाने से पशुओं को वसा, खनिज व लवण इत्यादि मिलते है। एक बट्टिका (वनज लगभग 2 कि. ग्रा.) भैंस को चटाने पर 5 दिन, गाय को चटाने पर 7 दिन, भेड़–बकरी को चटाने पर 20 दिन तथा घोड़े (यूरिया रहित) को चटाने पर 10 दिन के लिए पर्याप्त होती है। बट्टिका के मुख्य अवयव निम्नानुसार हैः

1. ऊर्जा स्त्रोतः शीरा (गन्ने या चुकंदर का), मकई का सार इत्यादि।
2. नत्रजन स्त्रोतः अप्रोटीन नत्रजन (यूरिया) या शाक सत्य प्रोटीन–तिल की खली, ग्वार चूरी या अन्य बीज की खली इत्यादि।
3. खनिज स्त्रोतः नमक, खनिज मिश्रण, डोलोमाइट–कैल्शियम व मैग्निशियम के कार्बोनट्स।
4. संरचनीय घटकः गेहूँ चापड़, तेल रहित धान चापड़, माल्ट स्प्राउट, जौ चापड़, बाजरा हस्क (डूरा), चावल पॉलिश, नीम व अरडू की सूखी पत्तियां इत्यादि।
5. बंधनः कार्बनिक बंधक जैसे ग्वार गोंद धूलि (ग्वार गोंद उद्योग का सह–उत्पाद)।

जाते हैं।

बहुपौषक तत्व बट्टिका या मिश्रण बनाने की विधि :

- सर्वप्रथम विभिन्न अवयवों, गेहूँ चापड़, पीली सोयाबीन, शीरा, यूरिया, डोलोमाइट, ग्वार गम, खनिज मिश्रण, नमक व पानी को निर्धारित अनुपात में मिला देते हैं।
- इसके बाद इस मिश्रण को अच्छी तरह से मिलाते हैं। सभी अवयव अच्छी तरह मिल जाने पर इस मिश्रण को इच्छित आकार के सांचों में डालकर हस्तचलित मषीन द्वारा दबा देते है जिससे मिश्रण आयताकार बट्टिका का रूप ले लेता है और इसे निकालकर सौर या विद्युत शुष्मक में सूखा लेते हैं, या
- अच्छी तरह मिलाये हुए मिश्रण को सीधे ही धूप में सूखाकर पौषक तत्व मिश्रण के रूप में काम लिया जा सकता है।
- इन्हें निर्धारित मात्रा में पशुधन की विभिन्न प्रजातियों को खिलाया जा सकता है।

मरूस्थलीय पशुओं के लिए बट्टिका की महत्ता

राजस्थान के कुल भौगोलिक क्षेत्र का लगभग 62 प्रतिषत भू–भाग (12 पष्चिमी जिले) शुष्क मरूस्थलीय क्षेत्र हैं। इस क्षेत्र में पड़त एवं चरागाहों का विस्तृत क्षेत्र है जो कि पशुओं की चराई के लिए उपलब्ध रहता है लेकिन कम वर्षा के कारण जो भी पशु–खाद्य उपलब्ध रहता है वह न केवल मात्रा बल्कि गुणवत्ता में भी निम्न स्तर का होता है। ऐसी स्थिति में पशुओं को न तो आवष्यकतानुसार चारा उपलब्ध हो पाता है साथ ही इसके कारण पशुओं में पौषक तत्वों कि लगातार कमी बनी रहती है। ऐसी अवस्था में हमारे संस्थान द्वारा तैयार पशु आहार बट्टिका जो कि विभिन्न अति आवश्यक पौषक तत्वों का समिश्रण है, विशेष लाभदायक सिद्ध हो सकती है। बट्टिका के पौषक तत्व धीर–धीरे पशुओं के प्रथम आमाशय में विद्यमान लाभदायक सूक्ष्मजीवों की वृद्धि में सहायक होते हैं। यही सूक्ष्मजीव चारे में विद्यमान संरचनीय शर्करा का विघटन कर वसा अम्लों का उत्पादन करते है जो अंततः पशु की आहार नलिका में अवशोषित हो जाते हैं। सूक्ष्मजीवी, बट्टिका में विद्यमान शीरे का उपयोग ऊर्जा स्त्रोत के रूप में एवं यूरिया तथा लवण मिश्रण में पाये जाने वाले गंधक घटक का उपयोग प्रोटीन के निर्माण में करते हैं। विटामिन, लवण मिश्रण, नमक एवं डोलोमाइट पशुओं की विभिन्न खनिज लवणों की आवष्यकता की पूर्ति करते है। गेहूँ की चापड़ बट्टिका को स्थायित्व प्रदान करता है तथा 'बी' समूह के विटामिनों का मुख्य स्त्रोत है। इस बट्टिका में प्रयुक्त कार्बनिक बंधक न केवल बट्टिका को सुदृढ़ता प्रदान करता है बल्कि यह पशु आहार नलिका में पूर्णरूपेण पचनीय भी है। इस प्रकार बट्टिका में मौजूद पौषक तत्व आमाशय के पारिस्थितिकीतंत्र का सुधार कर लाभदायक सूक्ष्मजीवियों की वृद्धि के अनुकूल बनाते हैं जिससे सूखे चारे का पाचन आसानी से हो सकें। यह पशुओं के विटामिनों, कार्बोहाइड्रेट्स, प्रोटीन एव अति आवष्यक खनिज लवणों की पूर्ति करके उनके स्वास्थ्य में सुधार व उत्पादन में वृद्धि भी करते हैं। इसके अलावा पशुधन की विभिन्न प्रजातियों में कुपोषण से बचाव होता है जिसके फलस्वरूप पशु मिट्टी, कंकड़, चमड़ा व प्लास्टिक थैलियों इत्यादि का सेवन बंद कर देते हैं।

तकनीकी हस्तांतरण

कुछ पशुपालकों व कृषकों ने वास्तव में पौषक तत्व बट्टिका/मिश्रण के फायदों को समझा व इसके बनाने की तकनीक जानने की इच्छा व्यक्त की। किसानों की इच्छा को ध्यान में रखते हुए कृषि विज्ञान केन्द्र, पाली में एक छः दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन काजरी, जोधपुर, की

पौषक बट्टिका इकाई के सहयोग से किया गया। इस प्रायोगिक प्रशिक्षण में पाली जिले के विभिन्न गॉवों के 15 किसानों/पशुपालकों ने भाग लिया।

संस्थान की इस तकनीक में विश्वास रखते हुए खारडा की ढ़ाणी गॉव के एक प्रशिक्षित कृषक श्री देदा राम पटेल (चित्र 1 व 2) ने 9,800 रूपये के शुरूआती निवेश से पौषक बट्टिका का वाण्ज्यिक स्तर पर उत्पादन शुरू किया। हमारे संस्थान ने इनकी मदद उपरोक्त तकनीक के अलावा बट्टिका बनाने की मषीन व दोहरा सौर शुष्मक (सोलर ड्रायर) विकसीत करने में की। यह उत्पाद इस क्षेत्र में काफी प्रसिद्ध हो गया है और इसकी काफी मॉग है, यहाँ तक की पड़ौसी राज्यों पँजाब, हरियाणा व गुजरात में भी। वर्तमान में श्री पटेल ने इस उद्यम को राज्य सरकार से पंजीकृत करवा लिया है और स्वरोजगार द्वारा सफलतापूर्वक लगभग 6,000 रूपये मासिक आय प्राप्त कर रहे हैं (तालिका–1)। इसी तरह अन्य दो प्रशिक्षणार्थियों ने भी [पाली जिले के अरटिया (चित्र 4) व सोनाईमाजी गॉव निवासी] पौषक बट्टिका/मिश्रण का उत्पादन सफलतापूर्वक शुरू कर दिया है। यह हमारे संस्थान को तकनीक हस्तांतरण में मिली सफलता को दर्शाता है।

बहुपौषक तत्व बट्टिका या मिश्रण खिलाने के फायदे

हमारे संस्थान व विभिन्न पशुपालकों के यहॉ किये गये प्रयोगों में पशुओं को बहुपौषक तत्व बट्टिका चटाने/खिलाने के निम्न फायदे देखे गये है

- पशु ज्यादा चारा खाते है, जो चारे के सुचारू पाचन का द्योतक है।
- पशु पानी ज्यादा पीते है, जो उपापचयी क्रियाओं की वृद्धि का द्योतक है।
- यह जुगाली करने वाले पशुओं की पाचन शक्ति को सुधारता है।
- दुधारू पशुओं में दुग्ध उत्पादन को 20 से 25 प्रतिशत तक बढ़ा देता है।
- पशुधन का कुपोषण से बचाव करता है।
- पषु नियमित रूप से गर्मी में आते है।
- यह महंगे आहार की मात्रा को कम करता है।
- पशुओं के स्वास्थ्य में सुधार करता है।
- इसे दूसरे पशु आहार/भूसे इत्यादि में आसानी से मिलाया जा सकता है।
- मेंमनों के भार व भेड़ों में ऊन में वृद्धि आंकी गई है।

पौषक बट्टिका या मिश्रण खिलाने में सावधानियाँ :

- बट्टिका को हमेशा सूखी रखें।
- जिन पशुओं को बट्टिका/मिश्रण खिलाया जा रहा है उन्हें पर्याप्त पानी पिलायें।
- बट्टिका के सूखेपन को समय–समय पर जॉचते रहे।
- बीमार/रोगी पशु तथा बछड़ों (छः माह से कम उम्र) को इसे नहीं खिलाये।
- जुगाली न करने वाले पशुओं (घोड़ा, सूअर आदि) के लिए यूरिया रहित पौषक बट्टिका/मिश्रण खिलायें।

तालिका 1. संस्थान से प्रशिक्षित कृषक द्वारा पौषक बट्टिका/मिश्रण उत्पादन से अर्जित आय एवं व्यय

दिनांक	सामान का खर्च (रू.)	बनाये गये उत्पाद की मात्रा		बेचे गये उत्पाद की कीमत (रू.)	गाँव/शहर का नाम जहाँ उत्पाद बेचे गये
		पोषक बट्टिका (संख्या)	पोषक मिश्रण (कि.ग्रा.)		
20.05.03	7,000	स्वयं के पशुओं हेतु	–	–	–
25.05.03	2,823	150	120	4,202	निम्बली, बगड़िया, रोहट, पाली, खारड़ा की ढ़ाणी
26.07.03	3,123	190	230	6,400	धर्मधारी, भाँवरी, रोहट, देवली, खारड़ा
15.09.03	2,934	200	122	5,223	सोनाईमाजी, पाली, निम्बली, अरटिया, रोहट
13.11.03	2,289	170	220	5,640	लापोद, देवली, सोनाईमाजी, नाडोल, बल्दों की ढ़ाणी, केरला, बगड़िया
05.12.03	2,654	210	142	5,042	निम्बली, बगड़िया, सुमेरपु, पाली, रोहट
02.01.04	14,920	975	1030	29,928	लापोद, देवली, बगड़ियसा, रोहट, नोडोल, सोनाईमाजी
18.03.04	2,775	105	280	5,133	निम्बली, अरटिया, सोनाईमाजी, रोहट, बगड़िया
06.06.04	3,080	290	180	7,644	--
योग	45,174	2,580	2,324	71,812	–

सारांश

शुष्क क्षेत्रों में पशुपालन, वर्षा आधारित खेती की तुलना में आर्थिक दृष्टि से ज्यादा सुरक्षित है विशेष रूप से सूखे के समय, लेकिन यह ज्यादा संगठित नहीं है। पशु चराई हेतु उपलब्ध क्षेत्र की प्रतिदिन घटती उपलब्धता पशुपालन में एक बड़ी बाधा बनती जा रही है। इस क्षेत्र में पशुओं के प्रवासन (माइग्रेशन) को भी उग्र बाधाओं का सामना करना पड़ता है। अतः इस क्षेत्र के पशुओं को निम्न स्तर (गेहँ का भूसा व सूखा घास आदि) के चारे पर निर्वाह करना पड़ता है। इन परिस्थितियों में पशुधन को संतुलित आहार उपलब्ध कराने में पौषक बट्टिका की भूमिका बहुत ही महत्वपूर्ण हो जाती है, साथ ही वैकल्पिक आहार तकनीक व चरागाह भूमि सुधार कार्यक्रमों को अपना कर शुष्क क्षेत्र में बेहतर पशु आहार प्रबंधन किया जा सकता है।

शुष्क क्षेत्र में पशु पोषण प्रबन्धन

डॉ. बी. के. माथुर
पशु–पोषण विभाग, पशुविज्ञान एंव चारा उत्पादन विभाग
केन्द्रिय रूक्ष क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर – 342003

पशुधन मरू क्षेत्र की ग्रामीण अर्थव्यवस्था का मुख्य स्तम्भ है। पारम्परिक ज्ञान एवं अनुभव के अनुसार यहाँ पर पशुपालन आधारित कृषि कार्य को ही महत्व दिया जाता है।

मरू क्षेत्र में मुख्यतः वर्षा आधारित कृषि होती है और क्योंकि यहॉ वर्षा कम, अनियमित होने के कारण खेती की सम्भावनायें बहुत ही कम तथा इससे प्राप्त लाभांश भी साधारणतय कम ही होता है। यहॉ अकाल आम बात है अतः केवल फसल खेती पर निर्भर नहीं रहा जा सकता है। इन परिस्थितियों में पशुधन कृषक के जीविकोपार्जन का मुख्य स्त्रोत है, इसीलिये पशुपालन मरू ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधारभूत हिस्सा है। सन् 1997 की पशु गणनानुसार राजस्थान में कुल 543.8 लाख पशुधन है, जबकि केवल मरू क्षेत्र के 12 जिलों में 286.0 लाख पशुधन है।

यहाँ पर पाये जाने वाली पशुओं की प्रजातियों ने इस शुष्क क्षेत्र के अनुरूप स्वयं को ढाल लिया है। इसी गुण के कारण मरूस्थलीय प्रतिकूल परिस्थितियों को सहन करने की क्षमता रखने वाली यहाँ की पशु नस्ल सर्वोत्तम मानी जाती है।

गाय – थारपारकर, राठी, कांकरेज व नागौरी

भेड़ – चोकला, नाली, मारवाड़ी, मगरा, पुगल, सोनाडी व जैसलमेरी

बकरी – मारवाड़ी व परबतसरी

ऊँट – बीकानेरी व जैसलमेरी

पशुपालन के मुख्य व्यवसाय के अतिरिक्त गॉवों व शहरों में बहुत लोग पशु द्वारा प्रदत्त उत्पादनों के व्यवसाय में संलग्न है। जैसे ऊन, दूध, खाल आधारित व्यवसाय इत्यादि। देष की कुल ऊन उत्पादन का 40 प्रतिशत भाग राजस्थान के मरूस्थलीय क्षेत्रों से ही प्राप्त होता है। इसी तरह दुग्ध उत्पादन भी यहाँ अत्यधिक होता है। यह एक गर्व की बात है कि दुग्ध, मांस एवं पशु उत्पादनों में मरू क्षेत्रों का भारतवर्ष में अत्यधिक योगदान है।

विज्ञान की दृष्टि से पशुपालन की तीन मुख्य शाखाऐं है :

1. पोषण
2. प्रजनन
3. स्वास्थ्य

पशु पोषण व्यवस्था : पशु उत्पादन में पशु पोषण का बहुत महत्व है। पशुपालन में कुल खर्चे का 70 प्रतिषत, पशु की खिलाई पर होता है। अतः पशुओं को सदैव आवष्यकतानुसार संतुलित पोषण उपलब्ध होना चाहिये जिससे वह लगातार उत्पादन दे सके। पूर्ण व संतुलित पोषण के अभाव में ये पशु अपने अनुवांशिक क्षमता के अनुसार उत्पादन नहीं कर सकते है। प्रयोगों द्वारा यह देखा गया है कि यदि यहाँ के पशुओं को पूर्ण आवष्यकतानुसार पोषण दिया जाये

तो इन पशुओं के उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है। शर्करा, प्रोटीन, वसा, लवण व विटामिनस आवश्यक मूल पोषक तत्व है व इन सबके उपयोग व पाचन के लिये पानी अतिआवश्यक होता है।

पौषक तत्व निम्नल खाद्य पदार्थ के संतुलित मिश्रण द्वारा पशुओं को उपलब्ध कराये जा सकते है

1. अनाज (सिरीयलस) : बाजरा, गेहूं–चापड, ज्वार, जौ, मक्की
2. खल : तिल बीज खल, कपास खल, रायडा बीज व तुम्बा बीज खल
3. दालें (लेग्यूमस) : ग्वार, चना चूरी, मूंग–मोठ कोरमा इत्यादि
4. घास एवं चारा : सेवण, धामण, बाजरा कुत्तर, ज्वार कडवी इत्यादि। कृषि के सह उत्पाद पेड़ के पत्ते इत्यादि।

भेड़, बकरी व गाय के लिय मरूस्थली क्षेत्र में वनस्पति वर्षा काल में स्वतः उग आती है व मुख्यतः मौसमी या एक वर्षीय पौधे होते है जो कि प्रचुर मात्रा में उपलब्ध रहते है। कुछ स्थानों पर बहुवर्षीय घास भी इस क्षेत्र में पाई जाती है जो कि पशु आहार के लिय सर्वोत्तम है, पर यह घास जैसे कि सेवण, धामण इत्यादि अब बहुत कम जगहों व कम मात्रा में पाई जाती है। बहुवर्षीय घास की पोषकता पकने पर धीरे–धीरे कम होती जाती है विशेषकर प्रोटीन, पक्की हुई घास की पाचकता भी कम हो जती है। स्वाभाविक तौर से वकरियां झाड़ियों व पेड इत्यादि के पत्ते जैसे बोरड़ी, खेजड़ी, कुमट, केर के फूल, अरडू, नीम, पीपल, सरेस, जाल व इजरायली बबूल इत्यादि चाव से खाली है। यह पशु को पौष्टिक आहार प्रदान करते है। खेजडी–बोरडी की पत्तियों को बांटे में मिलाकर दुधारू भेड़, बकरी व गाय को देना ज्यादा पौष्टिक व लाभदायक रहता है।

गायों का संतुलित पोषण : गायों को सदैव संतुलित आहार खिलाना चाहिये। यहाँ पर संतुलित का आषय मूल पोषक तत्वों को पशु की आवष्यकतानुसार खिलाना है। यह पोषक तत्व हैः शकर्रा (कार्बोहायड्रेट), प्रोटीन, वसा, लवण एवं विटामीनस्। पानी पोषक तत्वों के उपयोग के लिए अतिआवश्यक है। पशुओं से अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिये आवष्यक है संतुलित पौष्टिक आहार। प्रत्येक पशु को प्रति 100 किलो भार पर साधारणतयसा 2.5 से 3.0 किलो शुष्क आहार की आवश्यकता होती है। राजस्थान में गाय का औसतन शारीरिक भार 300 किलो ग्राम आंका जाता है। अतः इन्हें 7.5 से 9.0 किलोग्राम शुष्क पदार्थ बांटे व चारे से उपलब्ध करना चाहिये। शुष्क पदार्थ का तात्पर्य है आहार में उपस्थित जल की पूर्ण मात्रा को सूखाकर जो आहार शेष रह जाता है। कुल शुष्क पदार्थ आहार का एक तिहाई (1/3) भाग बांटे से व दो तिहाई (2/3) भाग चारे से देना चाहिये। सामान्यतः बांटे, खल, चूरी, धान इत्यादि में 85–90 प्रतिशत, सूखे चारे में 75 से 85 प्रतिषत व हरे चारे, रिजका, ज्वार कड़बी आदि में 15 से 35 प्रतिशत तक औसतन शुष्क पदार्थ होता है।

उदाहरण :

I. आहार शुष्क पदार्थ आवष्यकता प्रतिदिन : 2.5 से 3.0 कि.ग्रा. प्रति 100 कि.ग्रा. शारीरिक भार

II. गाय : औसतन शारीरिक भार कि.ग्रा.

III. शुष्क पदार्थ देना है : 7.5 से 9.0 कि.ग्रा.

IV. माना शुष्क पदार्थ देना है : 7.5 किलो

V. गाय को देना है 1/3 बांटे से शुष्क पदार्थ : 2/3 चारे से शुष्क पदार्थ अतः 2.5 किलो ग्राम बांटे से 5.0 किलो ग्रा. चारे से

VI. कुल चारा 5.0 किलो ग्राम

1/3 हरा : 2/3 सूखा

9.5 किलो ग्रा. शुष्क पदार्थ (उपलब्धता पर) : (3.5 किलो ग्रा. पदार्थ)

VII. अतः 1. 2.5 कि.ग्रा. शुष्क पदार्थ बांटे के लिये देना होगा : 3.0 कि.ग्रा. बांटा।

2. 1.5 कि.ग्रा. शुष्क पदार्थ हरे चारे के लिये देना होगा: 6 से 10 कि.ग्रा. हरा चारा

3. 3.5 कि.ग्रा. शुष्क पदार्थ सूखे चारे के लिये देना होगा : 4 से 4.5 कि.ग्रा. सूखा चारा।

VIII. पशुओं के लिये संतुलित बांटा निम्नलिखित खाद पदार्थ या अन्य (उपलब्धता के आधार पर) को मिलाकर तैयार किया जाना चाहिए।

1. खल	:	तिल/मूंगफली/कपास/तुम्बा/रायड़ा	20–30 भाग
2. चापड़	:	गेहूँ/चावल	30–50 भाग
3. चूरी	:	ग्वार/चना/अन्य दाल	15–20 भाग
4. धान	:	जौ/मक्का/बाजरी	15–20 भाग
5. खनिज लवणों का मिश्रण :			1 भाग
6. नमक	:		1 भाग

हर पशु की शारीरिक रखरखाव एवं उत्पादन हेतु आवष्यकतानुसार सूखे चारे के अलावा बांटा निम्न प्रकार से दिया जाना चाहिये

1. दूध न देने वाली गायों को 2 से 2.5 किलो प्रतिदिन
2. दुधारू गायों को – 2.5 कि.ग्रा. प्रतिदिन के अलावा, प्रति तीन लीटर दूध उत्पादन पर 1 कि.ग्रा. बांटा
3. ग्याभिन एवं पहली ब्यात को – एक कि.ग्रा. बांटा अतिरिक्त देना चाहिये
4. गाय जो प्रतिदिन दस लीटर से अधिक दूध दे – एक कि.ग्रा. अतिरिक्त बांटा देना चाहिए।

अन्य जानकारी हेतु निकटतम पशु चिकित्सालय से सम्पर्क करे।

कुछ अतिआवश्यक उपचार/जानकारियां :

आन्तरिक व बाह्य परजीवी रोग उपचार : वर्ष में कम से कम दो बार आंतरिक परजीवी नाशक दवा (ऐलबेनडाजोन/फेनबेनडाजोल/कलोसनटल इत्यादि) पशु को अवश्य दें। इससे पशु स्वस्थ रहेगा एवं पोषक तत्वों की पशु के लिये उपलब्धता भी बढ़ेगी।

लवण मिश्रण खिलाना : पशुओं को बांटे में लवण मिश्रण एक प्रतिशत के अनुपात में अवष्य दे व एक प्रतिशत साधारण नमक भी खिलाना चाहिये। यह करने से पशुओं में विभिन्न आवष्यक लवणों की कमी नहीं होगी जिससे उत्पादन अच्छा होगा व निरंतर बना रहेगा।

विटामीन "ए" की आवष्यकता : पशु के आहार में विटामिन "ए" होना अनिवार्य है। हरे चारे से पशु अपनी आवष्यकता की पूर्ति कर लेता है। यदि पशु को हरा चारा उपलब्ध नहीं होता है जो कि मरू क्षेत्र में आम बात है तो पशु विटामिन "ए" की कमी के रोग से ग्रस्त हो जाता है। अतः प्रत्येक 2–3 महिने बाद पशु को विटामिन "ए" का इंजेक्शन (विटेड/विटासेप्ट) अवश्य लगाना चाहिये।

गैर परम्परागत साइलेज में न्यूनतम 13 प्रतिशत अपरिष्कृत प्रोटीन की मात्रा होती है। इससे चारा स्वादिष्ट, सुगंधित, पाचनशील हो जाता है। 40 प्रतिशत खिलाई के आधार पर दाने की खुराक में 60 प्रतिशत की कमी की जा सकती है। गाय को रोजाना 10 कि.ग्रा. खिलाकर दाने गट्टे आदि राशन के खर्च में कमी और दूध की मात्रा एवं गुणवत्ता में सुधार से पशुपालक प्रति पशु न्यूनतम 7 रू प्रतिदिन का लाभ कमा सकता है। अतिवृष्टि और अकाल के समय साईलेज जीवनरक्षक का काम करता है।

बनाने की विधि

साइलो पिट बनाना

3 फीट गहरा व 5 फीट गहरा गढ्ढा लगभग 4 क्विंटल (400 किग्रा) चारे का साइलेज बनाने के काम आता है जिससे दो दुधारू जानवर 40 प्रतिशत खिलाई के आधार पर 20 दिन तक साइलेज खा सकते हैं। साइलेज बनाते समय ध्यान देने योग्य बातें

1. साइलो की परिधि उसकी गहराई से कम से कम आधी होनी चाहिये।
2. साइलो की अंदरूनी दीवारें सपाट और सीधी होनी चाहिए।
3. जमीन से थोडी ऊपर बनाना चाहिए जिससे आसपास का पानी अंदर न जा सके।
4. साइलो खोलने के बाद कम से कम एक महिने में साइलेज उपयोग में लिया जाना चाहिए।

साइलो सीमेंट, आर.सी.सी. अथवा कच्चा भी हो सकता है।

चारा तैयार करना

सूखे चारे की 1 से डेढ़ इंच कुत्तर करनी चाहिए। इसके बाद चारे को ढाई गुना पानी में भिगोकर टंकी, पके फर्श या जमीन पर अथवा प्लास्टिक शीट पर रख दें। अगले दिन 10 प्रतिशत मोलासिस (सीरा या गुड) तथा 2 प्रतिशत यूरिया (यानि 100 किलो सूखे चारे में 10 किलो मोलासिस और 2 किलो यूरिया) का घोल बनाकर भिगाए हुए चारे में मिला दें इसके बाद इस चारे को ठूंस–ठूंस कर साइलो में भर दें। साइलो को डेढ़ फीट ऊपर तक भर दें। ऊपर सूखा भूसा प्लास्टिक आदि रख मिट्टी से लिपाई कर दें। ध्यान रखने योग्य बात यह है कि साइलो के अंदर हवा पानी नहीं जाना चाहिए। डेढ़ से 2 महिने बाद खोल कर खिलाना शुरू कर दें। आपका गैर पारम्परिक साइलेज तैयार है।

पशुओं की खिलाई

पशुओं को उनके प्रतिदिन के आहार का 40 प्रतिशत यानि एक व्यस्क गाय को रोजाना 10 किलो साइलेज दिया जा सकता है। साइलो खोलने के बाद ऊपर से खराब चारा हो उसे फैंक दें। ऊपरी चारे का खराब होना साइलेज का खराब होना नहीं है और इससे घबराना नहीं चाहिए। साइलेज दूध निकालने से आधा घंटा पहले अथवा बाद में देना चाहिए। अन्यथा दूध में साइलेज की महक आ जाती है। साइलेज खिलाते समय दाना/कन्संट्रेट को 60 प्रतिशत तक कम किया जा सकता है।

गैर परम्परागत साइलेज के मुख्य लाभः

1. सूखे मौसम में साइलेज हरे चारे की कमी पूरी कर सकता है।
2. इस विधि से कम जगह में अधिक चारे का संग्रह किया जा सकता है।
3. साइलेज में 12–14 प्रतिशत प्रोटीन होता है। जिससे दूध और वसा में वृद्धि होती है।
4. अच्छी गंध होने के कारण पशु इसको ज्यादा पसंद करता है।
5. सूखा, बाढ़, अकाल के समय साइलेज पशुओं को जीवनदान दे सकता है।

रूक्ष क्षेत्र के पशु उत्पादन सुधार में आवास व्यवस्था की महत्तवता

डा. ए. के. पटेल
पशुविज्ञान एंव चारा उत्पादन विभाग
केन्द्रिय रूक्ष क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर – 342003

पशुओं को पालतु बनाने के पहले यह जंगलों व चरागाहों में जगंली रूप में रहते थे । विभिन्न पशुओं का घरेलूकरण मानव के हस्तक्षेप से पशुधन को मानवता के लिए उपयोगी बनाना सम्भव हुआ । यद्यपि रूक्ष क्षेत्र में पशुधन की नस्लें रेगिस्तान की आपदाओं के अनुरूप हैं, फिर भी इस क्षेत्र की जलवायु पशु उत्पादन क्षमता को प्रभावित किये बिना नहीं रहती है । प्रचण्ड जलवायु पशुधन की उत्पादकता पर विकराल प्रभाव डाल सकता है । विभिन्न अध्ययनों से यह तथ्य सामने आया है कि पशु आवास व्यवस्था से विपरीत प्रभावों को कम करके पशुधन उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है । आवास का मुख्य उद्देष्य पशु को आरामदायक वातावरण व स्वच्छ रख–रखाव प्रदान करना है जिससे पशु अपने अनुवंषिकी क्षमतानुसार अधिकतम उत्पादन कर सके । हॉलाकि, भारत के अधिकतर रूक्ष क्षेत्र में छोटे पशुओं को आवास प्रदान ही नहीं किया जाता हैं; जबकि बड़े पशुओं के लिए छप्पर वाला आवास साधारण बात है ।

रूक्ष क्षेत्र में पशु आवास प्रबन्धन की वर्तमान स्थिति

रूक्ष क्षेत्र के पशु आवास व्यवस्था पर एक सर्वेक्षणानुसार पष्चिमी राजस्थान में 80 प्रतिषत पशुपालक गाय–भैंसों को छप्पर या सरकंडों की आवास प्रदान करते हैं जबकि केवल 10 प्रतिषत भेड़–बकरियों को छप्पर में रखते हैं । शेष पशुपालक अपनी भेड़–बकरियों को खुले बाड़े में रखते हैं । ऐसा बाड़ा बनााने के लिए क्षेत्र में उगने वाली कंटीली झाड़ियों का प्रयोग किया जाता है । यद्यपि अधिकतर पशुपालक अपने पशुओं को कम से कम आवास व्यवस्था प्रदान करते हैं फिर भी सामान्य वातावरण के दौरान वे अपने पशुओं को पशुषाला के बाहर बॉधना अधिक पसन्द करते हैं । हॉलाकि खराब मौसम के दौरान – जैसे कि बरसात, बहुत अधिक गर्मी या सर्दी व रात के समय ठण्ड के मौसम में पशुओं को अधिकतर पशुषाला के अन्दर ही रखा जाता है ।

पशु आवास प्रायः पशुपालक के घर के पास ही बनाया जाता है जिससे कि पशुओं की देखभाल आसानी से की जा सके । कई बार जब पशुओं की संख्या थोड़ी होती है तब पशुपालक अपने ही घर के किसी हिस्से में पशुओं को भी रख लेता है । लगभग 80 प्रतिषत पशु आवास आयताकार व 20 प्रतिषत गोलाकृति में पाये गये । खुले बाड़े की आकृति अधिकतर गोल भी पायी गयी जो कि कंटीली झाड़ियों से बनाई गई थी लेकिन कहीं–कहीं पर इस उद्देष्य के लिए पत्थर की पट्टियॉ भी प्रयोग में लायी गई थी । आयताकार पशुषाला की औसतन आकार 12' x 10' x 7' व गोलाकार के लिए 5 से 8 फीट व्यास पाया गया ।

सर्वेक्षण क्षेत्र में अधिकतर आवास पूर्व–पष्चिम दिषा में पाये गये, लेकिन कुछ जगहों पर पशु आवास उत्तर–दक्षिण दिषा में बनाये गये थे जिससे कि सर्दी के मौसम में उत्तर दिषा से आने वाली ठण्डी हवाओं से पशुओं को बचाया जा सके । किसी भी पशुषाला में पक्के फर्ष का निर्माण नहीं मिला,

सभी में कच्चा फर्ष ही इस्तेमाल किया गया था । आवास में गीलेपन को रोकने के लिए फर्ष में खुले क्षेत्र की ओर ढ़लान दिया गया था । सभी पशु गृह हवादार बनाये गये थे क्योंकि दीवारों की ऊचॉई छत से काफी कम रखी गई थी । छप्पर वाले पशु आवासों का तापमान आवास के बाहर की तुलना में 2 से 4 डीग्री सेलषियस कम पाया गया ।

छप्पर वाले आवासों के निर्माण में विभिन्न प्रकार की सामग्री का इस्तेमाल किया गया था । जिसमें मुख्यतः शाखाएँ, टहनियॉ, झाड़ियॉ आदि शामिल थे । जोधपुर व नागौर जिलों में ज्यादातर खीम्प व शणियों से बनाये गये थे जबकि बाड़मेर जिले में बुई का प्रयोग मुख्य रूप से किया गया था । पशुषाला की तरफ़ वाली दीवारें आकड़ा, बोरडी व बबूल की टहनियों से बनाई गयी थी । छप्पर की मरम्मत का कार्य अधिकतर साल में एक या दो बार ही किया जाता है, प्रायः सर्दी व बरसात के मौसम में ।

सभी पशुषालाओं में नॉद रखे जाते हैं लेकिन पानी के कुंड केवल 10 प्रतिषत में ही पाये गये; क्योंकि ज्यादातर पशुओं को पानी पिलाने के लिए गॉव के जलाषयों पर ले जाया जाता है । खाने के प्रयोग के लिए नॉद अधिकतर पत्थर पट्टिकाओं की बनी होती है, जबकि कभी–कभी लोहे के कढ़ाहे, लकड़ी के बॉक्स व पुराने टायर आदि भी काम में लाये जाते हैं । खाद्य नॉद का औसतन आकार 1.0' x 1.5' x 1.0' पाया गया । पशु आवास में गोमूत्र व मल की निकास प्रणाली नहीं अपनाई गयी क्योंकि फर्श पक्का नहीं बनाया गया था । रूक्ष क्षेत्र में कम आर्द्रता के कारण पशु के वर्ज्य पदार्थ सीधे ही कच्चे फर्ष द्वारा सोख लिए जाते हैं ।

पशु आहार के भंडारण के लिए विषेष आकृतियॉ बनाना इस क्षेत्र में साधारण सी बात है जो कि दाना व चारे की अधिक मूल्यों के कारण हो सकती है । इस क्षेत्र के पशुपालक आहार को लम्बे समय तक सुरक्षित रखने के लिए विषेष ध्यान देते हैं जिससे कि हरे चारे की कमी के समय व अकाल की स्थिति में काम आ सके (अकाल जो कि इस क्षेत्र की एक आम विष्टिता है) । लगभग 80 प्रतिषत पशुपालकों ने आहार भंडारण के लिए पक्के व अर्ध–पक्के ढ़ांचे तैयार किये; जबकि 20 प्रतिषत किसानों ने पशु आहार कच्चे व परम्परागत ढ़ॉचों में भंडारण किया। पशुधन के लिए कोई भी सुव्यवस्थित आवास नहीं मिला जिसमें विषेष आने–जाने का रास्ता बनाया गया हो । पशुपालक आवास की अहम भूमिका से अनभिज्ञ हैं जो पशु उत्पादकता बढ़ाने में बहुत सहायक हैं ।

वातावरण बलाघात का पशु उत्पादकता पर प्रभाव

रूक्ष क्षेत्र की एक मुख्य विषेषता है रूखा वातावरण; जो कि कम व अस्थिर वर्षा, निम्न गुणवत्ता की मिट्टी, तापक्रम में अधिकाधिक भिन्नता, अधिक वायु वेग व अधिक वाष्पीकरण आदि के कारण होता है । इस तरह के क्षेत्र अधिकतर गोचर के लिए उपयुक्त होते हैं तथा इस क्षेत्र के पशुधन को प्रायः चरागाहों में व्यापक चराई पर पाला जाता है जहॉ इन पशुओं को चराई के दौरान किसी प्रकार की छाया आदि प्रदान नहीं की जाती है । लेकिन भीष्ण गर्मी के समय ये पशु वृक्षों की छाया का आश्रय लेते हैं; जबकि अत्यधिक ठण्ड के समय रात को पशु रेते के टीले, घने पेड़ों, व झाड़ियों का सहारा लेते हैं ।

पशु उष्णरक्त प्राणी हैं जो अपने शरीर का तापमान दक्षतापूर्ण कार्य करने के लिए बनाये रखने में सक्षम हैं। तापषून्य क्षेत्र के अलावा पशु पर बलाघात हो जाता है जिसके कारण मांस, दूध व अण्डे प्रति यूनिट खाद्य आहार के रूप में उत्पादकता काफी कम हो जाती है । बलाघात पशु की जैविकी पर गहरा असर करता है जिसके फलस्वरूप उत्पादकता कम हो जाती है । बलाघात पशु के अंदरूनी प्रणाली, प्रतिरक्षित व संवेदी तन्त्र आदि को प्रभावित करता है । ये सभी रूपांतरण पशु के द्वारा किये गये प्रयासों का हिस्सा है जो वो परिवर्तनीय वातावरण में अपने शरीर का तापमान बनाये रखने के लिए करता है ।

प्रजनक योग्यता

उष्ण बलाघात अधिक दूधारू पशुओं के उत्पादन व प्रजनन दोनों को प्रभावित करता है । गर्मी के मौसम में गर्भधारण दर 5 से 20 प्रतिषत तक कम हो जाती है क्योंकि पशु के गर्मी /ताव में आने के लक्षण बहुत क्षीण होते हैं जिसके कारण उसरता भी कम हो जाती है । होलस्टियन गायों को जब 21 दिनों के लिए पंखे की हवा में रखा गया तो नियमित गर्भकाल के लक्षणों में 71.4 प्रतिषत सुधार पाया गया; जबकि साधारण अवस्था में केवल 33 प्रतिषत पशुओं में ये लक्षण पाये गये ।

भैंस का प्रजनन व्यवहार जलवायु की स्थिति से बहुत अधिक प्रभावित होता है । शोध में यह पाया गया है कि भैंसों में अधिकतम गर्भधारण सर्दी के मौसम में (अक्टुबर से जनवरी) व सबसे कम गर्म व शुष्क (मई माह से अप्रैल) ऋतु में पाया गया है । दिनों की अवधि गर्भधारण दर को प्रभावित नहीं करती है ।

दुग्ध उत्पादन उपलब्धि

सभी स्तनपाइयों में ऋतु परिवर्तन के साथ दूध उत्पादन में बदलाव आता है । दूध उत्पादन के लिए अनुकूलतम तापमान अधिकतर प्रजाति, नस्ल व अत्यधिक गर्मी व सर्दी की सहनषीलता पर निर्भर करता है । विदेषी नस्ल की गायों का उत्पादन 21 से 27 डीग्री सेन्टीग्रेड तापमान पर कम होना शुरू कर देता है जबकि देषी गायों में 34 डीग्री सेन्टीग्रेड तापमान के बाद दूध उत्पादन कम होने लगता है । भारत वर्ष के उत्तर पष्चिमी भाग की शंकर नस्ल की गायों की उत्पादकता पर गर्म शुष्क जलवायु का विषेष प्रभाव नहीं पड़ा जबकि गर्म तर सापेक्ष व देष के पूर्वी भागों में जहॉ भारी वर्षा होती है, ऐसे पशुओं की उत्पादकता काफी कम पायी गई ।

कुछ विषेष शोधकर्ता बताते हैं कि सापेक्ष आर्द्रता व तापमान की बढ़ोतरी के साथ पशुओं का प्रतिदिन दुग्ध उत्पादन घटता है । दूध उत्पादन में कुल परिवर्तन का 62.75 प्रतिषत सापेक्ष आर्द्रता व तापमान के कारण होता है। रूक्ष क्षेत्र की थारपारकर नस्ल की गायों के दूध में वसा प्रतिषत गर्म शुष्क व गर्म आर्द्र दोनों जलवायु में कम पाई गयी । दूसरे देषों में भी होलेस्टियन गायों में उष्ण बलाघात के कारण दुग्ध उत्पादन में काफी कमी पायी गई इसके अतिरिक्त वसा व प्रोटीन मात्रा भी ग्रीष्म ऋतु के दौरान कम पाये गये ।

शरीर वृद्धि उपलब्धि

आर्थिक लाभ के लिए रखे गये सभी पालतु पशुओं में शरीर वृद्धि एक मुख्य पहलू है । उष्ण जलवायु बलाघात विषेषकर पशुओं के ब्याने के समय गाय व भेड़ों के बच्चों में जन्म के समय वजन

कम करता है । जन्म के वजन में कमी अनावरण अवधि के समानुपाती पाया गया है । यह सत्यापित तथ्य है कि भ्रुण वृद्धि उष्ण बलाघात से प्रभावित होती है, विषेषकर उच्च तापमान पर सम्भवतः मातृत्व रक्त के प्रभाव द्वारा जो भ्रूण को पूर्ति करता है । शरीर वृद्धि पर सर्दी का प्रभाव तुलनात्मक कम होता है जो कि विषेष आहार द्वारा काबू किया जा सकता है । उष्ण बलाघात के कारण छोटे पशुओं में शरीराकार छोटा रह जाता है जिसका प्रभाव नस्ल, वसापन, आहार व सापेक्ष आर्द्रतानुसार पड़ता है । यूरोपीयन गाय की नस्ल को लगातार अधिक तापमान पर रखने से शरीर वृद्धि पर ऐसा प्रभाव काफी कम पाया गया है ।

जलवायु बलाघात को आवास प्रबंधन द्वारा कम करना

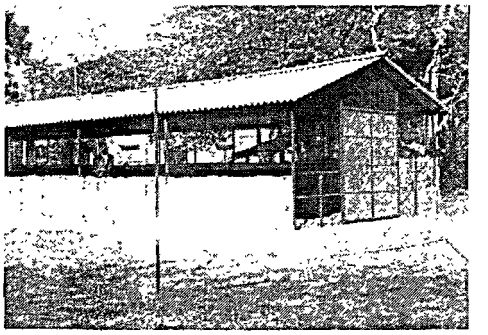

छाया अक्सर बंदनुमा मकानों में तापमान को कम करके पशु के शरीर की बाहरी सतह व श्वसन तन्त्र द्वारा वाष्पन को बढ़ाती है । वृक्ष छाया सबसे अधिक प्रभावषाली होती है क्योंकि वृक्ष सूर्य की किरणों से बचाव करते हैं व पत्तियों पर नमी की वाष्पन द्वारा ठण्डक प्रदान करते है । हॉलाकि रूक्ष क्षेत्र में कई बार पशुओं को छाया प्रदान कराने के लिए वृक्ष उपलब्ध नहीं होते हैं । सूखा घास व भूसा अधिक प्रभावी कृत्रिम छायादार पदार्थ हैं। भीष्ण गर्मी के दौरान भेड–बकरियों को छाया प्रदान करके उन पर उष्ण भार कम किया जा सकता है व इसके विपरीत प्रभावों से बचा जा सकता है । अध्ययन में यह पाया गया है कि जब भेड़ों को छाया प्रदान करते हैं तो उनमें उत्तम वृद्धि दर, आहार परिवर्तन क्षमता व उसरता में सुधार होता है तथा शरीरतंत्रीय कियाएँ भी कम पायी गयी हैं ।

इसके अलावा रूक्ष क्षेत्र में हवा का अधिक तापमान व अत्यन्त ठण्डी हवा भी पशुओं की उत्पादकता को प्रभावित करने वाले मुख्य अवयव है । इन सर्द हवाओं का उग्र प्रभाव उचित आवास व्यवस्था द्वारा काफी हद तक कम किया जा सकता है ।

विभिन्न आवास प्रणालियों में सूक्ष्म वातावरण

केन्द्रीय रूक्ष क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर के पशु प्रबन्ध विभाग में तीन प्रकार के आवासों (खुला आवास, छप्पर प्रणाली व पक्का आवास) के सूक्ष्म वातावरण अध्ययन किये गये (तालिका 1) ।

तालिका 1 : विभिन्न आवासों के अलग–अलग ऋतुओं में सूक्ष्म वातावरण

आवास प्रणाली	ग्रीष्म ऋतु (मार्च–जून)			वर्षा ऋतु + पतझड़ (जुलाई–अक्टुबर)			शर्द ऋतु (नवम्बर–फरवरी)		
	न्यून ताप	अधिक ताप	सा0 आर्द्र	न्यून ताप	अधिक ताप	सा0 आर्द्र	न्यून ताप	अधिक ताप	सा0 आर्द्र
खुला	23.4	37.6	51.3	23 3	36.2	72.0	11.4	30.2	50.7
छप्पर	23.8	36.8	53.1	24.0	35 2	73.3	12.1	29.0	52 1
पक्का	28 5	35.5	59.0	27.1	34.1	74 0	18 1	27.4	57.0

न्यूनतम तापमान दोनों आवासों (खुला व छप्पर प्रणाली) में कम पाया गया जबकि तापमान पक्के आवास में कम दर्ज किया गया । सापेक्ष आर्द्रता पक्के आवास में अधिक पायी गई जो कि घर के

अन्दर हवा के कम बहाव के कारण हो सकता है । अतः सारॉष यह है कि दो आवासों (खुला व छप्पर प्रणाली) का सूक्ष्म वातावरण इस क्षेत्र में ज्यादा भिन्न नहीं है जबकि पक्के आवास प्रणाली का सूक्ष्म वातावरण गर्मी व सर्दी के समय एकदम भिन्न पाया गया । अध्ययन में यह भी पाया गया है कि पक्का आवास बकरियों को गर्मी व सर्दी की प्रचण्डता से बचा सकता है जबकि शेष दोनों आवास (खुला व छप्पर प्रणाली) गर्मी,, सर्दी, बरसात व पतझड़ के मौसम में भी आरामदायक रहते हैं । एक तथ्य यह भी सामने आया है कि पक्का आवास पशुओं को गर्मी व सर्दी की उग्रता से बचाने में सक्षम है ।

मारवाड़ी बकरियों का विभिन्न आवासीय प्रणालियों में उपलब्धता का ऑकलन

परम्परागत व उन्नत पशु आवास प्रणालियों का पशु की उपलब्धता पर प्रभाव करने हेतु 18 वयस्क मारवाड़ी बकरियों का चयन किया गया । इन बकरियों को बराबर संख्यों में बॉट कर तीन प्रकार के पशु आवासों प्रणालियों (खुला आवास, छप्पर व पक्का आवास प्रणाली) में रखा गया, शेष सभी प्रबन्धन व्यवस्थाऍं एक समान रखी गई ।

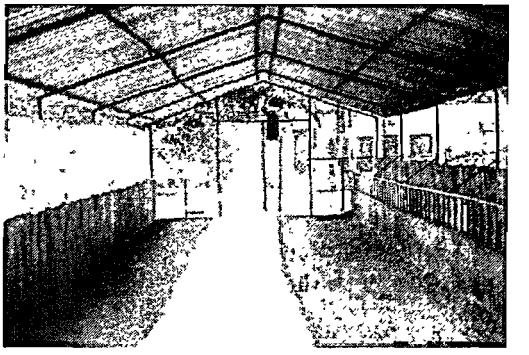

शरीरतन्त्रीय प्रतिक्रिया

बकरियों के शरीर तापमान, श्वास दर व नब्ज दर दिन–रात के समय दर्ज किये गये; सभी ऋतुओं व आवास प्रणालियों के तहत भिन्नता पायी गई । ये बकरियॉ 4 से 5 घण्टों के लिए चरागाह में चरने के लिए भेजी गयी जहॉ इन पर सूर्य की किरणों का सीधा प्रभाव पड़ा । इन्हीं घटकों के कारण इन पशुओं की शरीरतन्त्रीय प्रतिकिया दोपहर बाद काफी बढ़ी हुई दर्ज की गयी । मारवाड़ी बकरी का सर्दी ऋतु में भी दोपहर बाद शरीर का तापमान अन्य दो ऋतुओं की तुलना में अधिक पाया गया; जिससे यह संकेत मिलता है कि मारवाड़ी बकरी का रंग काला होने के कारण सर्दी ऋतु में अधिक गर्मी अवषोषित करके शरीर को गर्म रखती हैं ।

आवास प्रणाली का सुबह के समय पशुओं के तापमान पर कोई विषेष प्रभाव नहीं देख गया । जबकि दोपहर बाद पशुओं का तापमान खुले आवास में सभी ऋतुओं में अधिक दर्ज किया गया । इसका मुख्य कारण यह है कि सुबह के समय सभी आवासों का सूक्ष्म व दीर्घ वातावरण बराबर रहता हैं, लेकिन दोपहर बाद छप्पर व पक्के आवास का सूक्ष्म वातावरण खुले आवास की तुलना में आरामदायक हो जाता है क्योंकि बंदनुमा आवास में पूरी तरह छाया मिलती है ।

दुग्ध उत्पादन उपलब्धि

मारवाड़ी बकरियों का दुग्धकाल सितम्बर–अक्टुबर से शुरू हुआ व अप्रैल माह तक पूरा हुआ । मारवाड़ी बकरी के दुग्धकाल पर गर्मी की अपेक्षा सर्दी का अधिक स्पष्ट प्रभाव देखा गया (तालिका 2)

तालिका 2 : विभिन्न आवासीय प्रणालियों में मारवाड़ी बकरी का दुग्ध–उत्पादन उपलब्धि

आवास प्रणाली	दुग्ध–उत्पादन 90 दिन (लि0)	कुल दुग्ध–उत्पादन 90 दिन (लि0)	दुग्ध–काल (लि0)	व्सा (प्रतिषत)	अवसा ठोस पदार्थ (प्रतिषत)
खुला आवास	55.3 ± 5.3	76.5 ± 9 6	148.6 ± 15 2	3.04 ± 0.14	7.89 ± 0.08
छप्पर आवास	61.1 ± 4.1	83.8 ± 10.3	126.3 ± 11.1	3.41 ± 0.12	7.97 ± 0.09
पक्का आवास	62.8 ± 6.6	91.7 ± 14.0	143.8 ± 13.8	3.46 ± 0.11	8.12 ± 0.09

पक्के आवास मे पाली गयी बकरियों का दुग्ध सबसे अधिक दर्ज किया गया; क्योंकि सर्दी की ठण्डी रात को पक्के आवास में पशुओं का पूरी तरह से बचाव होता है जबकि खुले व छप्पर में इन पशुओं का ठण्ड से पूरी तरह बचाव सम्भव नहीं होता है ।

व्यवहारजन्य परिवर्तन

अत्यधिक सर्दी ऋतु में सुबह के समय जब उत्तर दिषा से सर्द हवा चलती है तो खुले आवास प्रणाली में पशुओं का आश्रय तलाषने वाला व्यवहार दिखाई दिया । पशुओं ने अपने शरीर के तापमान को बकरार रखने के लिए शरीर के बालों का इस्तेमाल किया; जबकि छप्पर व पक्के आवास के पशु सबसे अधिक बन्द जगह पर बैठे मिले । सर्द हवाएँ व वातावरण का कम तापमान पशु की उत्पादकता को अधिकाधिक प्रभावित करते हैं क्योंकि हवा पशु की बाहरी सतह से शरीर के तापमान को कम करने की प्रकिया को तेज कर देती है ।

सारांश

यद्यपि रूक्ष क्षेत्र के पशुओं की नस्लें अधिक व न्यून तापमान के प्रतिरोधी हैं फिर भी वे गर्मी व सर्दी की उग्रता से ग्रसित होते हैं । वृक्ष छाया (कुछ सीमाओं सहित) पशुओं के लिए एक सामान्य साधन पाया गया है । रूक्ष क्षेत्र में पशुओं के लिए बंदनुमा आवास जिसमें सामने की तरफ पशुओं के टहलने के लिए जगह भी उपलब्ध हो सबसे उपयुक्त पाया गया है ।

शुष्क क्षेत्र में वन चरागाह पद्धति से चारा उत्पादन

डा. एम. पाटीदार
पशुविज्ञान एवं चारा उत्पादन विभाग
केन्द्रिय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर – 342003

कृषि भारत की ग्रामीण अर्थ व्यवस्था का मूल आधार है, जबकि निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ–साथ खेतों के आकार छोटे हो रहे हैं। देश के सकल घरेलु उत्पाद (जी॰डी॰पी॰) में कृषि की साझेदारी कम हुई है एवं कृषि विकास वृद्धि दर भी प्रभावित हो रही है। ग्रामीण क्षेत्रों में घेरलु आय को पूरा करने के लिए पशपालन पर ज्यादा ध्यान देने की आवश्यकता है क्योंकि दुग्ध उत्पादन अब कृषि अर्थव्यवस्था में 20 प्रतिशत का योगदान देता है और 70 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या दुग्ध उत्पादन में सक्रियता से लगी हुई है। कृषि तन्त्र में जानवरों को अधिक संख्या में लगाने से कृषकों द्वारा भूमि, जल, धूप आदि प्राकृतिक संसाधनो और पारिवारिक श्रम का अधिकत्तम उपयोग किया जा सकता है। चूंकि भूमि की कमी है इसलिए दुधारू पशुओं की अतिरिक्त संख्या भारतीय कृषि–तंत्र की उत्पादकता को बढ़ाती है। इससे वर्ष भर लोगों को रोजगार मिलता है, जबकि खेती मुख्यतः एक ही फसल को उगाने तक ही सीमित होती है। शुष्क क्षेत्र में पशुपालन का महत्व ओर भी बढ़ जाता है, क्योंकि यहाँ पर जलवायु की विषम परिस्थितियों के कारण फसल उत्पादन सफल एवं लाभदायक कम ही हो पाता है। राजस्थान की अर्थव्यवस्था खेती एवं पशुपालन दोनों पर निर्भर करती है एवं राज्य की सकल घरेलु आय का लगभग 19 प्रतिशत भाग पशुपालन से प्राप्त होता है। राज्य देश में 10 प्रतिशत दूध, 30 प्रतिशत माँस और 40 प्रतिशत ऊन उत्पादन में योगदान देता है। राजस्थान में कुल भू–भाग का लगभग 19.67 मिलियन हैक्टर शुष्क क्षेत्र है। जिसमें लगभग 10 मिलियन हैक्टर भूमि पर खेती की जाती है व ज्यादातर वर्षा आधारित खेती है। सिंचित क्षेत्र का हिस्सा लगभग 10–15 प्रतिशत रहता है। यहाँ पर वनों का क्षेत्रफल भी 2 प्रतिशत से कम है, जबकि पर्यावरण का सही संतुलन बनाए रखने के लिए यह 33 प्रतिशत होना चाहिए। लगभग 40 प्रतिशत भूमि पड़त, बंजर एवं खराब रहती है। इस प्रकार के भू–क्षेत्र बढ़ने की संभावनाऐं ओर अधिक जताई जा रही हैं केवल 4 प्रतिशत भूमि ओरण–गोचर व चरागाह के लिए है जिसकी उत्पादन क्षमता बहुत कम है। इस तरह शुष्क क्षेत्र में न केवल कृषि उत्पादन कम होता है, परन्तु पशओं के लिए आवष्यक चारे की आपूर्ति भी नहीं हो पाती अतः आज की आवश्यकता है कि वन चरागाह पद्धति अपनाकर कम उपजाऊ भूमि का उत्पादन बढाया जाये, जिससे चारे, काष्ठ लकड़ी एवं जलाऊ लकड़ी की उपलब्धता में वृद्धि की जा सके।

वन चरागाह पद्धति का महत्व

हमारे देश मे वनों का पुराने समय से पशुओं की चराई के लिए उपयोग किया जाता रहा है। इसी सिद्धान्त को आगे बढ़ाते हुए चारा फसलों को पेड़ों के साथ उगाने की प्रक्रिया को वन–चारागाह पद्धति का नाम दिया गया है। यह भूमि प्रबन्धन की वह पद्धति है जिसमें पड़ों की पंक्तियों के बीच की रिक्त जमीन में घास या चारा फसलों को उगाया जाता है जिससे पशुओं के

लिए चारा उपलब्ध हो जाता है। यह पद्धति बजंर व पथरीली तथा अनुपयोगी भूमियों में ईधन एवं चारा प्राप्त करने के लिए उपयुक्त है। कृषि अयोग्य भूमि पर उन्नत तकनीकी से बहुउद्देशीय वृक्ष और झाड़ियों को उगाकर चारा, ईंधन, इमारती लकड़ी और हरी खाद की आपूर्ति की जा सकती है। शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों में वन चरागाह पद्धति से गर्मी के दिनों में पशओं को हरा चारा उपलब्ध करवाया जा सकता है। चारा वृक्षों से चारा पत्तियों के साथ–साथ जलावन लकड़ी भी प्राप्त होती है। व़न चारागाह पद्धति में उन्नतषील बहुवर्षीय घासों के साथ दलहनी फसलों को मिश्रित करने से चारा उत्पादन एवं घास की गुणवत्ता में वृद्धि होती है तथा कम उपजाऊ भूमि को अधिक उपयोगी बनाया जा सकता है। इस विधि से मृदा क्षरण कम होता है और भूमि में जीवांश पदार्थों की मात्रा में वृद्धि होती है, जिससे भूमि की जल–धारण क्षमता एवं उत्पादकता बढ़ जाती है। इस प्रकार वन चरागाह पद्धति द्वारा भूमि सुधार से कम उपयोगी भूमि को कृषि योग्य बनाकार विशाल पशुधन की भूख को मिटाने मे मदद मिल सकती है। वन चारागाहों में उगायें गये चारा वृक्षों की भूजल को गहराई से प्राप्त करने की क्षमता होती है, जिससे अन्य फसलों की अपेक्षा अधिक सूखा सहन कर सकने साथ ही पर्यावरण सरंक्षण में भी सहयोग मिलता है। वन चरागाह पद्धति में घासों एवं फसलों के साथ–साथ छायादार पेड़ एवं झाड़िया लगाते हैं जिससे पशओं को गर्मी में तपती धूप से बचाव होता है।

वन चरागाह पद्धति के लिए घास, पेड़ एवं झाडियों का चयन

वन चरागाह पद्धति के लिए पेड़, पौधों, झाडियों एवं घासों का चयन वर्षा की मात्रा और भूमि के प्रकार के अनुसार किया जाता है। पेड़ों का चुनाव करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिऐ कि जिन वृक्षों की पत्तियाँ चारे के रूप मे उपयोगी होती हैं उनमें तेज वृद्धि, पत्तियाँ पशुओं के खाने योग्य हों, काटने के बाद उनमें शाखा पुनः उत्पादन की क्षमता हो। सूखे को सहन करने की भी क्षमता एवं विपरित परिस्थितियों में भी उगने की क्षमता आदि गुण भी होने आवश्यकता हैं। पेड़ एवं झाड़िया छायादार होने चाहिए ताकि गर्मियों में पशओं का तेज धूप से बचाव मिल सके । शुष्क क्षेत्र के लिए वन चारागाह पद्धति में उगाये जाने वाले वृक्षों में मुख्य रूप से खेजड़ी नीम, बबूल, कुमट, अरडू, सिरस, विलायती बबूल, अजंन, मोपेन, बेर, नूतन आदि का चयन किया जा सकता है तथा झाडियों में झरबेरी, फोग, लाना, खरसन सिनिया आदि प्रमुख हैं। चरागाह विकास के लिए बहुवर्षीय घासें जैसे अंजन, धामण, सेवन, ग्राम़ना, मूरठ का चयन करना चाहिए। इसके साथ–साथ बहुवर्षीय दलहनी फसलों में मुख्य तौर से तितलीमटर (क्लाईटोरिया), सेम, वनकुल्थी, स्टाइलो, सिराट्रो आदि तथा एक वर्षीय दलहनी फसलों के रूप मे मोठ, मूंग, चवला तथा ग्वार को सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है।

(अ) वार्षिक वर्षा की उपलब्धता के अनुसार निम्नलिखित पेड़/झाडियों एवं घासों का चयन वन चरागाह पद्धति के विकास के लिए किया जा सकता है:

वर्षा की मात्रा	पेड/झाडिया	घासें/दलहनी फसले
150–300 मिमी	खेजडी (*प्रोसोपिस सिनेरेरिया*) कुमट (*अकेषिया सेनेगल*) बोरडी (*जिजीफस न्यूम्लेरिया*) बेर (*जिजीफस रोटन्डीफोलिया*)	सेवण (*लेज्युरस सिंडिकस*) अंजन घास (*सेन्क्रस सिलियेरिस*)
300–500 मिमी	बबूल (*अकेषिया निलोटिका*) खेजडी (*प्रोसोपिस सिनेरेरिया*) मोपेन (*कोलोफोस्परमम मोपेन*) नीम (*अजाडिराक्टा इन्डीका*) अरडू (*ऐलयान्थस एक्सलेसा*) सिरस (*एलबेजीया लेबेक*) नूतन (*डाइक्रोस्टेकिस न्यूटान्स*) अंजन (*हाईविकिया बाईनेटा*)	सेवण (*लेज्युरस सिंडिकस*) अंजन (*सेन्क्रस सिलियेरिस*) मोडा धामण (*सेन्क्रस सेटीजेरस*) ग्रामना (*पेनिकम एन्टीडोटल*) सेम (*लब लब परप्यूरियस*) तितलीमटर (*क्लाइटोरिया टरनेशिया*)
500 मिमी से ऊपर	सूबबूल (*ल्यूसेनिया ल्यूकोसिफेला*) अरडू (*ऐलयान्थस एक्सलेसा*) षीषम (*डलबरजीया सिसो*) अंजन (*हाईविकिया बाईनेटा*) सेंजना (*मोरिंगा ओलीफेरा*)	धामण (*सेन्क्रस सिलियेरिस*) मोडा धामण (*सेन्क्रस सेटीजेरस*) करड (*डाइकेनथीयम एनयूलेटम*) ग्रामना (*पेनिकम एन्टीडोटल*) स्टाइलो (*स्टाइलोसन्थस हमाटा*)

(ब) भूमि प्रकार के अनुसार निम्नलिखित पेड़/झाडियो एव घासों का चयन करे।

भूमि प्रकार	पेड़/झाडियॉ	घासे
1. सममतल भारी मृदा	बोरडी (*जिजीफस न्यूम्लेरिया*) मोपेन (*कोलोफोस्परमम मोपेन*) खेजडी (*प्रोसोपिस सिनेरेरिया*) अंजन (*हाईविकिया बाईनेटा*)	अंजन घास (*सेन्क्रस सिलियेरिस*) मोडा धामण (*सेन्क्रस सेटीजेरस*)
2. हल्की बलुई मृदा	बोरडी (*जिजीफस न्यूम्लेरिया*) मोपेन (*कोलोफोस्परमम मोपेन*) खेजडी (*प्रोसोपिस सिनेरेरिया*) फोग (*फेलीगोनम पोलीगोनोइडिस*) नूतन (*डाइक्रोस्टेकिस न्यूटान्स*)	सेवण (*लेज्युरस सिंडिकस*) अंजन (धामण) (*सेन्क्रस सिलियेरिस*)
3. कंकरीली	बोरडी (*जिजीफस न्यूम्लेरिया*) केर (*केपेरीस डेसिडुआ*) कुमट (*अकेशिया सेनेगल*)	बूर (*सीमबोपोगोन ज्वारनकुसा*) गठिया (*डकराइलेक्टीकम सिंडीकस*)
4. टीब्बा	फोग (*फेलीगोनम पोलीगोनोइडिस*) बावली (*अकेशिया जेक्कुमोन्टाई*) लाना (*हेलोजीलान सेलिकार्निकम*) कुमट (*अकेशिया सेनेगल*)	मूरठ (*पेनिकम टरजीडम*) ग्रामण (*पेनिकम एन्टीडोटेल*) सेवण (*लेज्युरस सिंडिकस*)
5. क्षारीय/लवणीय	जाल (*सालवाडोरा परसिका*) खारालाना (*हेलोजीलान रिकर्वम*) लुनी (*सुएडा फ्रटीकोसा*) इजराइली बबूल (*अकेषिया टोरटीलिस*) देषीबबूल (*अकेषिया निलोटिका*)	खारा घास (*स्पोरोलोबोलस मारजीनेटस*) रोडस घास (*क्लोरिस गायना*) दूब (*साइनोडोन डक्टाइलान*) *ब्रेकेरिया म्यूटिका*

बहुवर्षीय घासें, दलहनी पौधे एवं झाडियों के अलावा गोचर भूमि में पौष्टिक पौधे जैसेः कागांरोटी (*कोरकोरस ट्राइडेन्स*), दूधेली (*यूफोरबीया ग्रेनुलाटा*), सोनेकी (*पूलीकेरिया*), कांटी (*ट्रिबुलस टेरीस्टीरस*), बेकरिया (*इन्डीगोफेरा कोरडीफोलिया*), कागियो (*टेट्रापोगोन टेनुलस*), बगफूल (*हिलफेट्रोपियम मरीफोलियम*) आदि भी होते हैं, जिन्हें पश बहुत पसन्द करते हैं लेकिन अधिक

चराई के दबाव के कारण इन वनस्पतियों पर विपरित प्रभाव पड़ा है। इनके बीज आसानी से उपलब्ध नहीं होते। परन्तु सरंक्षित स्थानों से बीज सग्रहण कर घासों के बीज के साथ इनका छिडकाव किया जा सकता है इस तरह के पौधे घास सूखने पर हरे चारे का काम करते है।

वन चरागाह विकास एव प्रबंधन

वन चरागाह विकास के लिए उचित वृक्षों के साथ–साथ बहुवर्षीय घासों एवं चारा फसलों को लगाया जाता है जिससे वर्ष पर्यन्त, चारे के साथ–साथ जलाऊ लकडी एवं काष्ढ की प्राप्ति होती रहे। वन चरागाह पद्धति को टिक़ाऊ बनाये रखने के लिए उचित प्रबन्धन अति–आवश्यक होता है। भूमि एवं जलवायु के अनुसार उचित पेड़–पौधों का चुनाव करके उचित समय एवं विधि अपनाकर वन चरागाह विकसित किया जा सकता है वन चरागाह मे पेड़–पौधे लगाने का उचित समय जून–जुलाई माह है। जहॉ चरागाह लगाना है वहाँ से अवांछित एवं अव्यवस्थित झाड़िया हटाकार भूमि को अच्छी तरह से समतल करके पेडो को लगाने के लिए 45 ग 45 ग 45 सेमी आकार के गड्ढ़े आवश्यक दूरी पर जून के महिने में बना लेने चाहिए। पेड़ से पेड़ की दूरी 5 ग 5 मीटर, 5 ग 10 मीटर या 10 ग 10 मीटर जमीन की उपलब्धता व वृक्ष की प्रजाति के अनुसार रखी जाती है। पौधे लगाने से पूर्व गड़ढों को तीन–चौथाई तक 3:1 के अनुपात मे मिट्टी तथा गोबर की खाद के मिश्रण से भर देना चाहिए। इसके बाद जुलाई माह मे जैसे ही वर्षा शुरू हो, नर्सरी में तैयार किये हुऐ पौधो का रोपण कर देना चाहिए। पौधों को दीमक के प्रकोप से बचाने के लिए प्रति गड्ढ़ा 50 ग्राम मिथाइल पेराथियान या इन्डोसल्फास कीटनाशी को मिट्टी की ऊपरी सतह पर अच्छी तरह से मिला देना चाहिए। वन चरागाह लगाने से पूर्व सरकारी एवं निजि पौधषालाओं में पौधों की उपलब्धता को सुनिष्चित कर लेना चाहिए। पेड़ व झाडियों को बीज द्वारा भी वन चरागाह में उगाया जा सकता है, परन्तु इसमें पूर्ण सफलता मिलने की आशंका रहती है। इसलिए नर्सरी में तैयार पौधों का रोपण अच्छा रहता है।

पेड़ एवं झाडियां लगाने के बाद उन्नत तकनिकी से बहुवर्षीय घासों तथा दलहनी चारा फसलों को पेड़ों के बीच रिक्त जमीन पर उगायें। घासों को 50–75 सेमी की दूरी रखते हुए पंक्तियों में बुआई करें। प्रति हेक्टर जमीन के लिए 5–6 कि. ग्राम. अंजन घास, 5–7 कि. ग्रा मोडा धामन, 6–7 कि. ग्रा. सेवण तथा 2–3 कि. ग्रा. ग्रामना के बीज पर्याप्त होते है। बुआई करते समय ध्यान रहे कि बीज के ऊपर मिट्टी की परत कम से कम आए अन्यथा अंकुरण पर विपरित असर पडता है क्योंकि घास के बीजों के दाने बहुत ही छोटे होते हैं। बीजों को खेत की नम मिट्टी के साथ (1:5 आयतन से) मिलाकर बुवाई करें। बहुवर्षीय घासों को पुरानी जड़ो द्वारा भी लगाया जा सकता है परन्तु इसमे श्रम ज्यादा लगती है। इसके अलावा गोलियाँ बनाकर (जिसमें बीज, चिकनी मिट्टी, गोबर की खाद एवं रेत का अनुपात 1:35:2.5:2.5 में हो घास की बुवाई की जा सकती है।

अधिक चारा उत्पादन के लिए खाद एवं उर्वरको का आवश्यकतानुसार प्रयोग किया जा सकता है। 5–10 टन अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद को बुवाई से पूर्व खेत मे मिला देवें। इसके बाद बुवाई के समय 20 कि॰ ग्रा॰ प्रति हैक्टर की दर से फास्फोरस एवं नत्रजन डालें तथा वर्षा होने पर 20–25 दिन बाद 20 कि॰ ग्रा॰ नत्रजन का छिड़काव करें जिससे घास की गुणवत्ता

बढ़ जाती है। इसके अलावा चरागाह से अधिक गुणवत्ता वाला चारा प्राप्त करने के लिए घासों के साथ–साथ दलहनी फसलें जैसे सेम, तितली मटर, स्टाइलो ग्वार, चंवला, मोठ आदि को समानान्तर 4–4 मीटर की पट्टियों मे बुआई करें। दलहनी फसलों का 15–20 कि॰ ग्रा॰ बीज एक हैक्टर के लिए पर्याप्त रहता है। दलहनी फसलों के वन चरागाह मे लगाने से भूमि की उर्वरकता मे सुधार होता है तथा प्रोटीन की मात्रा भी बढ़ जाती है।

केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर में वर्ष 2003 से 2006 तक वन चरागाह पद्धति के लिए किये गये प्रयोग में अजंन और सेवण घास को *हार्डविकिया बाइनेटा* व मोपेन के पेड़ों की बीच पट्टियो में उगाया गया। प्रयोग के परिणाम दर्शाते (सारणी 1) हैं कि प्रारम्भिक अवस्था मे पेड़ों की वृद्धि धीमी होने से धास की उपज पर विपरीत प्रभाव नहीं पड़ा। सेवण तथा अंजन घास को अकेले पड़ों के बीच पट्टी में बोने से शुष्क पदार्थो की अधिक उपज प्राप्त हुई और दलहनी फसल चवला अथवा सेम के साथ समानान्तर पट्टिओं में बोने से कम वर्षा वाले वर्षो में चारे की उपज मे थोड़ी कमी जरूर हुई परन्तु चारे की गुणवत्ता (क्रूड प्रोटीन की उपज) मे बढ़ोतरी हुई। इस पद्धति मे 40 कि॰ ग्रा॰ नत्रजन प्रति हैक्टर डालने से 15 प्रतिशत की उपज मे वृद्धि हुई। इसके अलावा पाँचवे वर्ष के उपरान्त पड़ों से पत्तियाँ एवं जलाऊ लकड़ी प्राप्त होने लगी। प्रतिवर्ष 15–20 क्विंटल सूखे चारे के अलावा लगभग 1–2 क्विंटल सुखी पत्तियाँ एवं 2–3 क्विंटल जलाऊ लकड़ी प्राप्त होती है।

वन चरागाह पद्धति में कभी–कभी पेड़ एवं झाडियों को खेत में न लगाकर, चरागाह के चारों तरफ लगाकर बाड़ के रूप मे भी उपयोग किया जा सकता हैं। मेड़ बन्दी के साथ–साथ नागफली, थोर और इजराइली बबूल लगा सकते हैं। अगर नीम के लिए उपयुक्त जमीन है तो चरागाह के चारो तरफ लगा सकते है। इससे चरागाह की सुरक्षा के साथ–साथ इनकी पत्तियों को पशुओं के लिए चारे के रूप मे प्रयोग किया जा सकता हैं।

सारणी 1. फसल प्रणाली एवं नत्रजन उर्वरक का वन चरागाह पद्धति में चारे की उपज पर प्रभाव

फसल प्रणाली	सूखे चारे की उपज (क्विंटल/है.)				
	2003	2004	2005	2006	औसत
अंजन घास	22.08	10.98	23.70	14.55	17.82
सेवण घास	30.80	6.62	29.50	11.94	19.71
चंवला/सेम.	24.60	1.33	15.80	3.15	11.22
अजंन, चवंला/सेम	27.75	7.01	19.30	10.04	16.07
सेवण, चंवला/सेम	30.78	5.38	27.30	10.04	18.38
नत्रजन की मात्रा (कि॰ ग्रा॰/है॰)					
0	25.39	6.17	21.23	9.11	15.48
40	29.01	6.37	24.87	10.85	17.78

वन चरागाह पद्धतियों के प्रकार

वन चरागाह मे विभिन्न प्रकार के पेड़ों, झाडियों तथा बहुवर्षीय घासों को लगाया जाता है। इन पेड़–पौधों की बढ़वार एक समान नहीं होती, इसलिए पौधों की ऊचाँई के आधार पर वन चरागाह पद्धति को तीन श्रेणियों मे विभाजित किया जा सकता है।

(1) एक स्तरीय वन चरागाह पद्धति : इस पद्धति में केवल घास व दलहनी चारा फसलों की खेती की जाती है (चित्र 1)। इस पद्धति में समान ऊचॉई से बढ़ने वाली बहुवर्षीय घास तथा एक वर्षीय दलहनी चारे व दाने वाली फसलें या बहुवर्षीय दलहनी चारा फसलों को चरागाह भूमि या कम उपजाऊ भूमि पर उगाते हैं। इन फसलों को मिश्रित या समानान्तर पट्टियों में उगाया जाता है। चरागाह की इस पद्धति का उपयोग चारे के साथ खाद्यान्न उत्पादन के लिए भी किया जा सकता है।

चित्र 1: एक स्तरीय वन चरागाह पद्धति

चित्र 2: द्वि स्तरीय वन चरागाह पद्धति

चित्र 3: त्रि स्तरीय वन चरागाह पद्धति

(2) द्विस्तरीय वन चरागाह पद्धति : इस पद्धति में असमान ऊचॉई तक बढने वाली चारा फसलों एवं वृक्षों/झाड़ियों की रोपाई एक ही साथ एक ही भूमि पर करते हैं। भूमि की सतह पर चारा फसलों के रूप में धामण, सेवण, कुरा घास, ग्रामणा तथा दलहनी चारा फसलों को चारा वृक्षों को बीच मे उगाया जाता है (चित्र 2)। इस पद्धति में चारे वाली फसलें भूमि की सतह से कुछ ऊचॉई तक बढ़ती है तथा चारा वृक्ष ज्यादा ऊचॉई तक बढते हैं।

(3) त्रिस्तरीय वन चरागाह पद्धति : इस पद्धति में तीन स्तर की ऊचॉई के पौधे लगाये जाते हैं। इसमें कम ऊचॉई के लिए घास या दलहनी फसलें, मध्यम ऊचॉई के लिए झाडियॉ तथा तीसरे स्तर में ऊचें बढ़ने वाले चारा वृक्षों को लगाया जाता है (चित्र 3)। अन्य पद्धतियों की तुलना में इस पद्धति से अधिक चारा एवं ईधन की प्राप्ती होती है एवं चारे की उपलब्धता भी लम्बे समय

तक बनी रहती है। इस तरह इस विधि से प्राकृतिक संसाधनों का अधिक उपयोग हो पाता है जिससे प्रति ईकाइ क्षेत्र में अधिक चारा एवं ईधन मिलता है।

वन चरागाह पद्धति में घास–पेड़ों में अनुकूलता एवं प्रतिर्स्पधा

वन चरागाह विकास की प्रारम्भिक अवस्था में घास का उत्पादन वृक्षों एवं झाड़ियों से प्रभावित नहीं होता, क्योंकि इस समय पेड़ों की वृद्धि धीमी होती है तथा उनका फैलाव भी कम होता है। जैसे–जैसे पेड़ बढ़ने लगते हैं और उनका फैलाव बढ़ता जाता है तो उनके आस–पास उगने वाली घास एवं चारा फसलो की वृद्धि प्रभावित होती है और उपज में कमी आ जाती है। केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर मे किये गये अध्ययन से पता चलता है कि घास की उपज एव पाला उत्पादन बेर की झाड़ियों के घनत्व से प्रभावित हुआ। झाड़ियों का घनत्व बढ़ने से घासो से चारा उत्पादन कम हुआ जबकि पाला उत्पादन बढ़ गया। इससे यह निष्कर्ष निकाला गया कि झाड़ियों के घनत्व जिससे 14 प्रतिशत क्षेत्रफल आच्छादित रहता है, अधिक चारा प्राप्त किया गया। इस प्रकार अन्य पेड़ों जैसे बबूल, कुमट, नीम, सिरस आदि के नीचे घास की वृद्धि कम होती है जबकि खेजड़ी के नीचे व आस–पास घास एवं चारा फसलों की वृद्धि अच्छी होती है और चारा उत्पादन बढ़ जाता है। एक अन्य प्रयोग में पाया गया कि मोपेन एवं *हार्डविकिया बाईनाटा* के पौधों को 9 ग 5 मी दूरी पर लगाने से प्रथम चार वर्षो तक घासों एवं दलहनी फसलों के उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पडा जबकि पांचवे वर्ष में वृक्ष से 1 मीटर की दूरी तक घास एव दलहनी फसलों की वृद्धि कुछ कम हुई तथा पेड़ से दूरी बढ़ने पर घास की वृद्धि प्रभावित नहीं हुई। इसी तरह वृक्षों की वृद्धि पर घास का प्रभाव देखा जा सकता है। प्रारम्भिक अवस्था में जब वृक्ष छोटे होते हैं और जड़े कम गहराई तक होती है तब घास और वृक्ष मे पोषक तत्वों एवं नमी के लिए प्रतिस्पर्धा अधिक होती है और पड़ो की वृद्धि प्रभावित होती है परन्तु जैसे–जैसे वृक्ष बड़े होते जाते है और जड़े गहराई तक जाती है तब पेड़ो की वृद्धि पर घास का प्रभाव नहीं होता है। इसलिए स्थापना वर्ष में पेड़ो के तने से 1 मीटर की परिधि के घास निकाल देनी चाहिए।

वन चरागाह पद्धति की देखभाल

वन चरागाह लगाने के बाद अधिक उत्पादन के लिए उचित देखभाल करना अति आवश्यक है। वन चरागाह पद्धति का विकास वैसे तो बरसात के महिनों में ही किया जाता है लेकिन रोपे गये पौधों के लिए प्रथम तीन महिनों तक अधिक सावधानी बरतनी चाहिए। वर्षा कम होने पर पर्याप्त नमी बनाऐ रखने के लिए ऊपरी मृदा की गुड़ाई कर देनी चाहिए या कूड़े करकट द्वारा पौधे के आस–पास बिछावन कर देना चाहिए, जिससे भूमि से वाष्पीकरण रोका जा सकता है। वन चरागाह

के स्थापना वर्ष मे पशुओं की चराई पर प्रतिबन्ध रखना चाहिए और जब घास बढ़ जाऐ तो काटकर प्रयोग करना चाहिए। वर्ष में कम से कम एक बार अवांछित झाडियों एवं खरपतवारो को साफ करना चाहिए ताकि ये वन चरागाह की गुणवत्ता को खराब न कर सके तथा नमी एवं पोषक तत्वों का ह्रास भी न हो। प्रर्याप्त नमी होने पर एक बार आवश्यकतानुसार उर्वरको का प्रयोग करना चाहिए। बहुवर्षीय घासों की लगातार चराई के कुछ वर्षो बाद घास सूखने लगती हैं जिससे घास का फूटना कम हो जाता है। इसलिए पुराने अवषेष (स्टेबल्स) को हटाकर, घास की बुआई दुबारा कर देनी चाहिए।

वन चरागाह मे चराई एवं कटाई प्रबन्ध

वन चरागाह का उपयोग इस प्रकार करना चाहिए कि चरागाह की उत्पादकता लम्बे समय तक बनी रहे। वृक्षों एवं झाड़ियों की आवष्यकानुसार कटाई–छंटाई करें। घास लगने के प्रथम वर्ष पशुओं से चराई नहीं करावें और जहाँ पर पशुओं द्वारा चराई नहीं करानी हो तो घास को 50 प्रतिशत फूल आने की अवस्था मे काटकर पशुओं को हरी घास खिला सकते हैं अथवा सूखा कर 'हे' बनाकर जब हरी घास उपलब्ध नहीं हो पशओं को खिलाया जा सकता है। अधिक चराई होने से बोई गई घासें जल्दी खत्म हो जाती है और इनकी जगह ऐसे खरपतवार आ जाते हैं जिनको पशु नहीं खाते। घास की चराई या कटाई हर साल करायें। इससे घास अच्छी फूटती है और घास का उत्पादन बढ़ता है।

अधिक चारा प्राप्त करने एवं चरागाह को पूर्ण विकसित रखने के लिए चक्रवात चराई करानी चाहिए। लगातार चराई पद्धति में पशओं को चराने से चरागाह के किसी भी भाग को विश्राम नहीं मिलता तथा घास को वृद्धि का समय नहीं मिलता है इससे चरागाह जल्दी समाप्त हो जाते हैं। परिवर्तित चराई पद्धति में चरागाह को चार बराबर भागों में बॉट देते हैं। पहले एक भाग में पशुओं को चराते है तथा इस भाग में चारे की उपलब्धता कम होने पर अगले भाग मे पशुओं को चराई के लिए प्रवेश देना चाहिए। इस तरह चारों भागों की पूर्ण चराई करनी चाहिए, जिससे प्रत्येक भाग को विश्राम मिल जाता है और घास की वृद्धि के लिए भी समय मिल जाता है। चरागाह के कुछ हिस्से को बीज उत्पादन के लिए रखना चाहिए। वन चरागाह पद्धति में जब उन्नत घास, जैसे अंजन या सेवण घास को दलहनी फसल के साथ मिश्रित करके बुवाई करते हैं तो प्रति हेक्टर 1–2 गायें या 6–8 भेड़ों या बकरियों के लिए पर्याप्त चारा मिलता है।

शुष्क क्षेत्र में सर्दी तथा गर्मी की ऋतु में जब हरा चारा उपलब्ध नहीं होता है तब वन चरागाह पद्धति में लगे वृक्षों की कटाई छंगाई करके प्राप्त पत्तियों को हरे चारे के रूप मे उपयोग किया जा सकता है। इन वृक्षों की मुलायम टहनियों, फूलों, फलियों एवं पत्तियों को भी चारे के रूप

मे प्रयोग लिया जा सकता है। कुछ पौधों की फलियॉ उसकी पत्तियों से अधिक स्वादिष्ट होती हैं। चारा वृक्षों की कटाई तब करें जब वृक्ष पूर्ण रूप से विकसित हो जाएं। 'हेज' के रूप मे लगाई गई झाडियों को 2–3 मीटर ऊपर से काटने से अधिक चारा मिलता है। जबकि चारा वृक्षों की कटाई करते समय इस बात का ध्यान रहे कि 2–3 सेमी से अधिक मोटाई की शाखाओं को न काटें तथा वृक्ष के एक तिहाई हिस्से को छोड़ कर कटाई–छंगाई करें जिससे वृक्ष की वृद्धि प्रभावित न हो। इस प्रकार वन चरांगाह पद्धति से वर्ष भर चारे की उपलब्धता को बनाये रखने में मदद मिलती है।

चारे की पौष्टिकता बढ़ाने हेतु उपचार विधियां

डॉ. आलोक चंद्र माथुर
तकनीकि अधिकारी
कृषि विज्ञान केन्द्र
केन्द्रिय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर – 342003

गाय एवं भैंसों को केवल सूखा चारा विशेषतौर से गेहूँ का भूसा या खाखला खिलाकर स्वस्थ नहीं रखा जा सकता। खाखले जैसे चारे में पौष्टिक तत्वों का अभाव रहता है। ऐसा चारा खिलाने से शरीर में ऊर्जा एवं अन्य पोषक तत्वों की कमी आने लगती है जिससे पशु कुपोषण का शिकार होकर मृत्यु की ओर अग्रसर होने लगता है। यह स्थिति अकाल के समय रेगिस्तानी क्षेत्रों में सामान्य रूप से हो जाती है।

अतः पशु धन को बचाने हेतु अकाल जैसे समय में, जबकि पशु को खिलाने हेतु केवल खाखला ही उपलब्ध होता है, ऐसे सूखे चारे को उपचारित करके ही खिलाना चाहिये। चारा उपचारण के द्वारा चारे की पौष्टिकता में कई गुणा वृद्धि हो जाती है और पशु को केवल उपचारित चारे पर भी स्वस्थ रखा जा सकता है।

चारे की उपचारण विधि अत्यन्त सरल, सस्ती, आसानी से अपनाने योग्य हैं।

अ. तुरंत उपयोग हेतु

10 किलो (या इसी अनुपात में) सूखे चारे/खाखले के उपचारण हेतु लगभग चार लीटर पानी में 100 से 200 ग्राम यूरिया (कृषि उपयोग हेतु रसायनिक खाद), 1/2 किलो गुड़ (रसकट, पशु–उपयोग हेतु) तथा 50 ग्राम लवण–मिश्रण (मिल्कमिन, लाइकामिन, सरस, आयुमिन आदि ट्रेड नामों से उपलब्ध) घोलकर सूखे चारे में अच्छी तरह मिला दें। मिलाने के पश्चात् तुरंत ही यह चारा पशु को खिलाया जा सकता है। इस उपचारण की लागत (प्रति दस किलो चारा) 7–11 रूपये आती है एवं इससे पशु के शरीर में सभी पौषक तत्व आवष्यक मात्रा में पहुँच जाते हैं।

ब. अन्तराल के बाद उपयोग हेतु

इस विधि से उपचार के बाद चारा पहले बताई गई विधि के मुकाबले अधिक पौष्टिक होता है परन्तु इस विधि में उपचारित करने के बाद चारे को लगभग 21 दिन तक ढक कर रखना पड़ता हैं।

एक क्विंटल उपचारित चारे को उपचारित करने हेतु 3–4 किलो यूरिया एवं 40–50 किलो (मौसमानुसार) पानी की आवश्यकता होती है। इस विधि में यूरिया का छिड़काव चारे की विभिन्न परतों (3–4 या अधिक) में किया जाता है। अर्थात् उपचार करने वाले चारे की कुल मात्रा को 3–4 भागों में विभाजित कर उपचार किया जाता हैं। इस हेतु फर्ष या तो पक्का होना चाहिये अन्यथा उस पर प्लास्टिक बिछा ले जिससे छिड़कने वाला यूरिया का घोल मिट्टी में न जाये।

कुल एक क्विंटल चारा उपचार करने हेतु (उदाहरण के तौर पर) पहले फर्श पर 25 किलो सूखा चारा बिछाकर उसकी चौकड़ी बना लें। 10–12 लीटर पानी में 750 ग्राम से 1 किलो तक यूरिया घोल लें। यूरिया को घोलने हेतू किसी पेड़ की टहनी का उपयोग करें उसे हाथ से न

मिलायें। इस यूरिया के घोल को चारे के ऊपर एक सार छिड़कें। इस हेतु झारे का उपयोग ज्यादा अच्छा रहता हैं। ध्यान रहे कि यह यूरिया का घोल पशु ओं के लिये अत्यन्त घातक होता है अतः इस घोल को पशु को न पीने दें। छिड़काव के बाद चारे को पैरों से अच्छी तरह से दबायें जिससे चारे के बीच की हवा निकल जाये।

इस उपचारित पहली तह के ऊपर फिर उसी अनुपात में यूरिया का घोल बनाकर छिड़के एवं पैरों से दबायें। दूसरी तह के ऊपर इसी तरह तीसरी एवं चौथी तह बिछाकर उपचार करें। सबसे ऊपर करें। सबसे ऊपर की तह को भी अच्छी तरह पैरों से दबाकर उसके ऊपर प्लास्टिक (मेणियां) इस प्रकार ढके कि उसका निचला हिस्सा भी चारे के नीचे दब सके। इस हेतु एक से अधिक टुकड़ों या बोरियों का भी उपयोग किया जा सकता है। चारों तरफ से अच्छी तरह ढकने के बाद प्लास्टिक को पत्थर आदि से अच्छी तरह दबा दे जिससे हवा आदि से प्लास्टिक हट न सके।

इस तरह चारे को लगभग 21 दिन तक ढका रहने दे। उसके बाद प्लास्टिक कवर को एक तरफ से खोलने पर अमोनिया गैस की गंध आती है तथा उपचारित चारे का रंग भी भूरा हो जाता हैं।

आवश्यक मात्रा में चारे को बाहर निकालकर 2–3 घण्टे हवा में खुला रखे जिससे उसमें अटकी अमोनिया गैस की गंध निकल जाये। इस उपचारित चारे को सीधे पशु को खिलाया जा सकता है। हो सकता है कि हल्की गंध होने के कारण पशु इसको आरंभ में स्वीकार न करें। पशु को इसके खिलाने की आदत धीरे–धीरे डालनी पड़ती है। इस हेतु आरंभ में इसमें सादा चारा मिलाया जा सकता है जिसकी मात्रा धीरे–धीरे कम की जा सकती हैं।

इस उपचारित चारे को अधिक पौष्टिक एवं स्वादिष्ट बनाने के लिये इसमें खिलाने से पहले 5–10 प्रतिशत गुड़ तथा 0.5 प्रतिषत लवण मिश्रण पानी में धोलकर मिलाया जा सकता हैं। इस मिश्रण को खिलानें से पशु के शरीर की सभी आवश्यकतायें पूरी हो जाती हैं। इस सम्पूर्ण उपचारण का खर्चा भी एक रूपया प्रति किलोग्राम से कम ही आता हैं।

आम तौर पर मध्यम वजन की गाय 5–7 किलो एवं अधिक वजन वाली गाय या भैंस 7–10 किलो सूखा चारा खाती है। अधिक दूध देने वाले पशु को इस उपचारित चारे के अतिरिक्त दैनिक दूध की मात्रा का 30–40 प्रतिषत संतुलित दाना मिश्रण (पशु आहार) भी अवष्य खिलाना चाहिये।

साइलेज द्वारा सूखे चारे का पौष्टिकरण

पूरे देश में और विशेष रूप से इलाको जैसे पष्चिमी राजस्थान आदि में न केवल पशुओं के चारे की समस्या प्रमुख है। बल्कि उपलब्ध चारा सूखा, रेशेदार और निम्न कोटि का होने के कारण पशुओं को खिलाने के उपयुक्त नहीं होता है। इस प्रकार का चारा जैसे भूसा, कडबी, खाकला, सूखी पत्तियां, घासे, खरपतवार और फसलों के बचे हुए अन्य पदार्थ जानवरों का केवल पेट भरने का काम कर सकते हैं। जिससे जानवरों में प्रोटीन, ऊर्जा आदि आवष्यक तत्वों की कमी ज्यों की त्यों बनी रहती है। इसी कारण गर्मियों में दुधारू पशुओं का दूध और वजन कम हो जाता है। दूसरे अकाल के समय में घास और सूखी पत्तियां भी उपलब्ध नहीं होती। इस समस्या का एक ही समाधांन है। सूखे चारे का गैर परम्परागत विधि द्वारा साइलेज बनाना।

गैर परम्परागत साइलेज में न्यूनतम 13 प्रतिशत अपरिष्कृत प्रोटीन की मात्रा होती है। इससे चारा स्वादिष्ट, सुगंधित, पाचनशील हो जाता है। 40 प्रतिशत खिलाई के आधार पर दाने की खुराक में 60 प्रतिशत की कमी की जा सकती है। गाय को रोजाना 10 कि. ग्रा. खिलाकर दाने गट्टे आदि राशन के खर्च में कमी और दूध की मात्रा एवं गुणवत्ता में सुधार से पशु पालक प्रति पशु न्यूनतम 7 रू प्रतिदिन का लाभ कमा सकता है। अतिवृष्टि और अकाल के समय साईलेज जीवनरक्षक का काम करता है।

बनाने की विधि

साइलो पिट बनाना

3 फीट गहरा व 5 फीट गहरा गढ्ढा लगभग 4 क्विंटल (400 किग्रा) चारे का साइलेज बनाने के काम आता है जिससे दो दुधारू जानवर 40 प्रतिशत खिलाई के आधार पर 20 दिन तक साइलेज खा सकते हैं। साइलेज बनाते समय ध्यान देने योग्य बातें

1. साइलो की परिधि उसकी गहराई से कम से कम आधी होनी चाहिये।
2. साइलो की अंदरूनी दीवारें सपाट और सीधी होनी चाहिए।
3. जमीन से थोड़ी ऊपर बनाना चाहिए जिससे आसपास का पानी अंदर न जा सके।
4. साइलो खोलने के बाद कम से कम एक महिने में साइलेज उपयोग में लिया जाना चाहिए।

साइलो सीमेंट, आर.सी.सी. अथवा कच्चा भी हो सकता है।

चारा तैयार करना

सूखे चारे की 1 से डेढ़ इंच कुत्तर करनी चाहिए। इसके बाद चारे को ढाई गुना पानी में भिगोकर टंकी, पके फर्श या जमीन पर अथवा प्लास्टिक शीट पर रख दें। अगले दिन 10 प्रतिशत मोलासिस (शीरा या गुड) तथा 2 प्रतिशत यूरिया (यानि 100 किलो सूखे चारे में 10 किलो मोलासिस और 2 किलो यूरिया) का घोल बनाकर भिगाए हुए चारे में मिला दें इसके बाद इस चारे को ठूंस–ठूंस कर साइलो में भर दें। साइलो को डेढ़ फीट ऊपर तक भर दें। ऊपर सूखा भूसा प्लास्टिक आदि रख मिट्टी से लिपाई कर दें। ध्यान रखने योग्य बात यह है कि साइलो के अंदर हवा पानी नहीं जाना चाहिए। डेढ़ से 2 महिने बाद खोल कर खिलाना शुरू कर दें। आपका गैर पारम्परिक साइलेज तैयार है।

पशुओं की खिलाईः

पशुओं को उनके प्रतिदिन के आहार का 40 प्रतिशत यानि एक व्यस्क गाय को रोजाना 10 किलो साइलेज दिया जा सकता है। साइलो खोलने के बाद ऊपर से खराब चारा हो उसे फैंक दें। ऊपरी चारे का खराब होना साइलेज का खराब होना नहीं है और इससे घबराना नहीं चाहिए। साइलेज दूध निकालने से आधा घंटा पहले अथवा बाद में देना चाहिए। अन्यथा दूध में साइलेज की महक आ जाती है। साइलेज खिलाते समय दाना/कन्संट्रेट को 60 प्रतिशत तक कम किया जा सकता है।

गैर परम्परागत साइलेज के मुख्य लाभ

1. सूखे मौसम में साइलेज हरे चारे की कमी पूरी कर सकता है।
2. इस विधि से कम जगह में अधिक चारे का संग्रह किया जा सकता है।
3. साइलेज में 12–14 प्रतिशत प्रोटीन होता है। जिससे दूध और वसा में वृद्धि होती है।
4. अच्छी गंध होने के कारण पशु इसको ज्यादा पसंद करता है।
5. सूखा, बाढ, अकाल के समय साइलेज पशुओं को जीवनदान दे सकता है।

खेजड़ी पर्णों को उपचारित कर इनकी पोषकता बढाये

डा. एच. सी. बोहरा
पशु–पोषण प्रयोगषाला
केन्द्रिय क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर 342 003

खेजड़ी, खेजड़ा, झॉटी, शमी (संस्कृत) इत्यादि नामों से जाना जाने वाला एक बहु–उपयोगी मरू वृक्ष है। यह एक विरला वृक्ष है जिसकी पत्तिया शरद ऋतु में झड़ती है तथा गर्मी के आरम्भ में नई कोंपले आकर भीषण गर्मी में जब सभी मरू–वृक्ष पर्णहरित हो जाते है, तब यह उच्च जलीय (पर्ण–जलीय मात्रा, ग्रीष्म कालः 66%, शीत काल, 44%) एवम् पोषक तत्वों से युक्त, नई पत्तियों से आच्छादित रहता है। यह मरू–पशुओं और चारावाहो को न केवल छाया प्रदान करता है वरन् पशुओं को पूर्व–विधमान जल, पचनीय प्रोटीन तथा शर्करा प्रदान कर मरू–प्रदेश की ग्रीष्म ऋतु से उबरने में वरदान साबित है (तालिका संख्या 1)। मरू–प्रदेश पशु–पालक इनकी टहनीया काट कर पत्तीयो को सुखा लेते है तथा पशु–चारा भण्डार में अपने पशुओं को चारा/दाणे के साथ खिलाने के लिए संग्रह कर लेते है।

इस प्रकार शीत काल में संग्रहित की गई पत्तियों में बिटा (तालिका संख्या 1) कैरोटीन, जो कि पशु के आहार नाल में विटामिन ए मे रूपान्तरित हो जाता है, तथा प्रोटिन की प्रचुर मात्रा (शुष्क भार का 16.1 प्रतिशत) विद्यमान रहती है। परन्तु इसकी पचनीयता निम्न होने के कारण पशुओं में इसके उच्च–प्रोटीन की मात्रा का लाभ नहीं मिल पाता है। केन्द्रिय रूक्ष क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर (काजरी) ने इस समस्या का विस्तृत अध्ययन किया तथा पाया कि इस समस्या का मुख्य कारक इन पत्तीयों में उच्च प्रोटीन के साथ पाये जाने वाला टैनिन नामक रसायन है। यह बहु–फिनोलिक अर्थात् चक्रीय कार्बनिक अणुओं का जटिल यौगिक है। हालाकि यह यौगिक इस वृक्ष को व्याधी कारक कीट–फंफूद से बचता है, पर साथ–ही–साथ यह पर्ण–प्रोटिन के साथ संयुक्त होकर इसकी पचनीय प्रोटीन के मान (पचनीय प्रोटीन मानः खेजड़ी–पर्ण 3.1 प्रतिशत भेड़ एवम् 5.5 प्रतिशत बकरी मे) को कम कर देता है। इस की खेजड़ी पर्णो में उपस्थिति के कारण इसमें विद्यमान केवल 22.1 प्रतिशत प्रोटीन का ही पाचन हो पाता है, जबकि अरडू एवम् सरेस के पर्ण–प्रोटीन का क्रमशः 83 एवम् 69 प्रतिशत तक पाचन हो जाता है।

काजरी की पशु–पोषक प्रयोगशाला ने खेजडी पर्णो को उपचारित करने की सरल एवम् प्रभावशाली तकनिक विकसीत की है। जिससे इन पत्तियों की पोषकता में वृद्धि की जा सके। शीत–काल में इकट्ठी की गई खेजड़ी की सूखी पत्तियों को उपचारित करने के लिए इनको एक प्लास्टिक के टब अथवा लौहे के एक बर्तन में लेले तथा इनको 3.2 प्रतिशत कपड़ा धोने के सोडे (सोडियम कार्बोनेट) के जलीय विलयन में भिगो दे। 1 किलो सूखी पत्तियों को 160 ग्राम सोडे के 5 लीटर पानी के घोल में रखें। बर्तन को धूप में रखे तथा सम्भव हो तो बर्तन को प्लास्टिक की चद्दर अथवा काँच से ढक दे जिससे उपचारित माध्यम गर्म रहें। सुबह से शाम तक धूप में रखने के बाद भूरे–काले द्रव को फैंक दें। पत्तियों को एक बार और साफ पानी से धोने के बाद, धूप में सूखा कर भण्डारण करे है। इस प्रकार खेजड़ी–पर्णों को उपचारित करने से इनमें 94 प्रतिशत तक से टैनिक

की मात्रा में (अनुपचारित एवम् उपचारित पत्तियों में टैनिक की मात्रा क्रमशः 14.8 एवम् 0.90 प्रतिशत होती है) तक कमी हो जाती है तथा पोषकता मे आशातीत वृद्धि होती है।

तालिका संख्या 1. विभिन्न ऋतुओं में खेजड़ी पर्णो के पोषक तत्वों की मात्रा (शुष्क भार का प्रतिशत)

पोषक तत्व/टैनिन	ग्रीष्म ऋतु	वर्षा–काल	शरद ऋतु
पर्व–निर्मित जल की मात्रा	66.00	64.00	77.00
अपरिमार्जित प्रोटीन	15.40	14.30	17.50
ईथर विलनीय घटक	4.50	4.30	4.20
नत्रजन रहित घटक	56.80	52.60	54.00
अपरिमार्जित रैशे	13.00	18.60	14.40
फास्फोरस	0.18	0.18	0.16
कैल्शियम	1.92	1.94	2.00
टैनिन	8.60	12.00	14.80

बकरी दुग्ध उत्पाद: ग्रामीण क्षेत्रों में आय का स्त्रोत

डा. एम. एस. खान
पशु जीव–रसायन विभाग, पशुविज्ञान एंव चारा उत्पादन विभाग
केन्द्रिय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर – 342003

मरूस्थलीय ग्रामीण क्षेत्रों में बकरी एक महत्वपूर्ण पशु है। ग्रामीण क्षेत्रों की आर्थिक स्थिति सुधारने मे बकरी का महत्त्वपूर्ण योगदान है। यह एक प्रकार से चलित ए. टी. एम. मशीन है। जिससे किसान किसी भी समय आय़ अर्जित कर सकता है। इसके दूध का प्रयोग प्राचीन काल से हो रहा है। यह पौष्टिक एवं पाचक होने के कारण बच्चों को पिलाया जाता है।

भारत वर्ष में बकरी के दूध का उत्पादन लगभग 34 लाख मेट्रिक टन है। राजस्थान प्रदेश में 7 लाख मेट्रिक टन दूध का वार्षिक उत्पादन होता है। शुष्क क्षेत्र में 1998–99 से 2001–2002 तक इसके उत्पादन में 53 प्रतिशत बढ़ोतरी हुई है जबकि गाय और भैंस के दूध में 19 प्रतिश्त की बढ़ोतरी हुई।

बकरी के दूध के लाभ

1. बकरी का दूध अन्य पशुओं के दूध की तुलना में अधिक लाभकारी है।
2. बकरी का दूध पौष्टिक एवं पाचक है अन्य दूध की अपेक्षा जल्दी पचता है।
3. बकरी का दूध कार्बोनिक प्रकृति का है।
4. इसमे किसी प्रकार के रसायन नहीं पाये जाते है।

बकरी का दूध गाय के दूध से गुणों में उत्तम पाया गया है। इसमें कम वसा (2.5–3.8 प्रतिषत) और अधिक लेक्टोज (2.8–3.6 प्रतिशत) पाया जाता है। इसमे केल्शियम, पोटेशियम, आयरन, मेग्निशियम, फॉस्फोरस और कॉपर जैसी धातुऐं गाय के दूध की अपेक्षाकृत अधिक पाये जाते है। इसमे विटामिन–सी भी अधिक होता है जो शरीर के लिए आवश्यक होता है। 100–150 मि॰ ली॰ बकरी का दूध एक बच्चे के लिये परिपूर्ण आहार है।

ग्रामीण क्षेत्रों में इसके दूध का उपयोग प्रायः चाय बनाने ओर छोटे बच्चों को पिलाने में ही किया जाता रहा है। वर्तमान समय में दूध उत्पादन बढ़ने से इसके द्वारा उत्पाद भी तैयार किये जा सकते है। काजरी ने अपने शोध एवं प्रयास से दूध में पायी जाने वाली गंध को दूर करके इसके उत्पाद तैयार किये है। जैसे, पनीर, दही, कुल्फी इत्यादि। हमारे किसान भाई यहॉ की तकनीक को अपना कर इसका उपयोग अपने स्थानीय स्तर पर करें तो उनके लिये यह एक आय का अच्छा स्त्रोत बन सकता है।

बकरी के दूध का पनीर

पनीर, जो कि भारतीय चीज के रूप में मशहूर है, को अम्ल एवं ताप की इकट्ठी क्रिया से बनाया जाता है। पनीर का प्रयोग विभिन्न प्रकार के शाकाहारी व्यंजनों, स्नैक्स एवं पकोड़ा बनाने के लिए प्रयोग किया जाता है। पनीर में प्रोटीन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होती है इसलिए शाकाहारियों के लिए यह माँस का विकल्प है। बकरी के दूध का पनीर उन मरीजों के लिए सर्वोत्तंम है जो गाय के दूध के प्रोटिन के प्रति संवेदक होते है। बकरी के दूध को 90 डिग्री सैन्टीग्रेड पर गर्म करके साइट्रिक अम्ल से फाड़े तो उच्च गुणवत्ता का पनीर बनाया जा सकता है।

बकरी के स्वच्छ, ताजे दूध को मलमल के कपडे से छाने। दूध को धीरे–धीरे 89–90 डिग्री सेन्टीग्रेड तक हिलाते हुए गर्म करें। उसके बाद साइट्रिक अम्ल (दानेदार) 0.15 प्रतिशत की दर से मिलायें तथा दूध को हिलाते रहें। जैसे ही हरे पीले रंग का व्हे दिखाई देने लगे, पनीर को मलमल कपडे से छान लें। उसके बाद पनीर को ठण्डे पानी में दो से तीन मिनट तक डुबो कर रखें। तत्पश्चात् पनीर कर्ड को कपड़े में बॉध लें तथा उसके ऊपर लकड़ी या पत्थर रख दें ताकि बचा हुआ व्हे भी निकल जांए तथा पनीर के टुकड़े आपस में जुड जाएँ। उसके बाद पनीर को कपड़े में से निकाल लें तथा इसे 90 मिनट के लिए फ्रिज में रखें ताकि पनीर अच्छी तरह सैट को जाए।

बकरी के दूध से बनाए गए पनीर में नमी 48.16 प्रतिशत तथा कुल ठोस 51.84 प्रतिशत प्रोटीन व वसा क्रमशः 21.45 प्रतिशत तथा 25.34 प्रतिशत है। पनीर में 1.83 प्रतिशत राख होती है व उत्पादन 14.59 प्रतिशत है।

बकरी के दूध से पनीर बनाने के लिए निम्नलिखित प्रवाह चार्ट का प्रयोग करें–

बकरी का दूध

↓

मलमल के कपडे से छानना

↓

90 डिग्री सैन्टीग्रेड पर गर्म करना

↓

0.15 प्रतिषत की दर से दानेदार साइट्रिक अम्ल मिलाना

↓

दूध को फाड़ना

↓

व्हे को मलमल के कपड़े से अलग करना

↓

पनीर कर्ड को 2–3 मिनट के लिए ठण्डे पानी मे डुबोना

↓

पनीर कर्ड को 30 मिनट के लिए दबा कर रखना

↓

90 मिनट के लिए फ्रिज में रखना

↓

ताजा पनीर

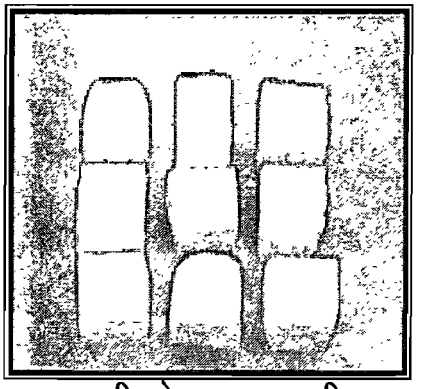

बकरी के दूध का पनीर

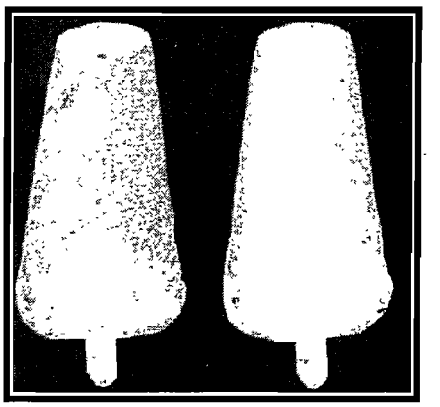

बकरी के दूध की कुल्फी

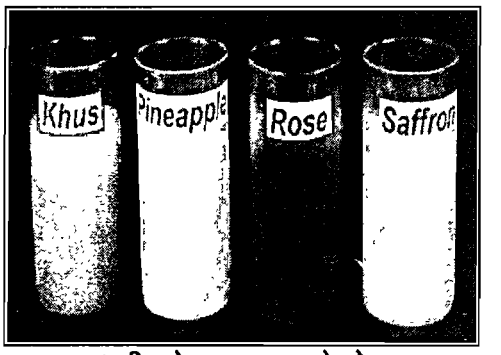

बकरी के दूध का व्हे पेय

शुष्क एवं विषम परिस्थितियों में पूरक पशु आहार बट्टिका एक वरदान

श्री रमेश चन्द्र बोहरा

केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर – 342 003

दुधारू चौपाया जानवरों में एक रूमन होता है। जो आमाशय का प्रथम भाग बनाता है। ये सिर्फ रूमनधारी या जुगाली करने वाले जानवरों में ही पाया जाता है। इसकी एक प्रमुख बात यह भी होती है कि यह अमोनिया नत्रजन से एक कोशिकीय प्रोटिन का निर्माण कर सकता है। प्रोटिन दूध का मुख्य घटक होता है इसलिये इसे प्रोटिन की खान कहना अतिस्योक्ति नहीं है। उसमें (रूमन में) विभिन्न प्रकार के जीवाणू होते है जो अमोनिया नत्रजन को एक कोशिय प्रोटिन में परिवर्तित कर देता है।

प्रायः देखा गया है कि शुष्क क्षेत्र मे जहाँ कि हरे चारे की कमी रहती है और जानवरों को सूखे चारे पर निर्भर रहना पड़ता है, अतः ऐसी विषम परिस्थितियों को ध्यान रखते हुऐ काजरी में "पूरक पशु आहार बट्टिका" का निर्माण किया गया है। इससे जानवरों के चयापचयों का वृद्धिकरण देखा गया है। प्रति बट्टिका के मुख्य घटक निम्न है।

1. गुड़ – 0.8 कि.ग्रा.
2. गेहूँ का चोकर – 0.6 कि.ग्रा.
3. यूरिया – 0.1 कि.ग्रा.
4. केल्साईट – 0.1 कि.ग्रा.
5. तेल रहित सोयाखल – 0.1 कि.ग्रा.
6. बाइन्डर – 25 ग्रा.

उपरोक्त संघटन में यूरिया अमोनिया नत्रजन का वाहक है एवं इसके साथ गुड़ ऊर्जा स्त्रोत एवं अन्य घटक फॉस्फोरस व अन्य खनिज है जो शुष्क क्षेत्र की अन्य विषम परिस्थितियों में जानवर के भरण पोषण में उत्तम पूरक के रूप में सहायक सिद्ध हुई है।

प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि यह बट्टिका मारवाड़ी बकरी, थारपारकर गाय व भेड़ के लिये उपयोगी के साथ–साथ स्वाटिष्ट भी है जिससे यह पशु बड़े चाव से इसे चाटते है।

प्रयोगों से यह भी सिद्ध हुआ कि आहार बट्टिका के चटाने से रक्त संघटन में किसी भी प्रकार का विकार नहीं हुआ, इससे यह पता चलता है कि पशु की चयापचयी क्रियाऐं भी ठीक से काम करती है।

थारपारकर बछड़ियों को जब आहार बट्टिका (पूरक) का सेवन (चटाने) पर यह देखा गया कि इनकी ठीक तरीके से वृद्धि देखी गयी व साथ ही इनके पहली ब्यातं की उम्र में भी कमी आयी।

उपरोक्त के अलावा इससे पशु के खान पान में भी बढ़ोत्तरी देखी गयी है।

अन्त में यह कह सकते हैं कि आहार पूरक पशु आहार बट्टिका शुष्क क्षेत्र के लिये वरदान सिद्ध हुई है।

*सम्पूर्ण एवं पूरक पशु-आहार बट्टिका उत्पादन तकनीकी**
पर
त्रिदिवसीय पशु–कृषक प्रशिक्षण कार्यक्रम (11–13 फरवरी, 2008)

कार्यक्रम

दिनांक	समय	विवरण
11 फरवरी	प्रातः 10.00 – 11.00	प्रशिक्षणार्थियों का आगमन एवम् रजिस्ट्रेशन
	प्रातः .11.00 – 11.30	माननीय निदेशक से प्रशिक्षणार्थियों का परिचय
	प्रातः 11 30 – 11.45	चाय
	प्रातः 11.45 – 12.00	संयोजक एवं सह–संयोजकों से प्रशिक्षणार्थियों का परिचय
	प्रातः 12.00 – 1.00	मरूस्थल में पशु–पालन की समस्याऐं एवम् सम्भावनाऐं (डॉ. एन. वी. पाटील)
	दोपहर 1.00 – 2.30	भोजनावकाश
	अपराह्न 2.30 – 3.00	मरूस्थल के पशु की नस्लें तथा रखरखाव का उनके उत्पादन पर प्रभाव (डॉ. ए. के. पटेल)
	अपराह्न 3.00 – 4.30	विभिन्न पशु–आहार उत्पाद, उनके मुख्य घटक व पशु उत्पादन में उनकी महत्ता (डॉ. एच. सी. बोहरा)
	अपराह्न 4.30 – 5.15	बकरी के दूध के स्वास्थ्यवर्धक उत्पाद (डॉ. एम. एस. खान)
12 फरवरी	प्रातः 9.00 – 11.00	पूरक पशु–आहार बट्टिकाऐं: उत्पादन तकनीक (डॉ. एच. सी. बोहरा)
	प्रातः 11.00 – 11.30	चाय
	प्रातः 11.30 – 1.00	काजरी पौष्टिक दाणाः उत्पादन तकनीक (डॉ. एच. सी. बोहरा)
	दोपहर 1.00 – 2.30	भोजनावकाश
	अपराह्न 2.30 – 4.00	थारपाकर पशुओं का रखरखाव, सूखे चारे को यूरिया द्वारा उपचारित करने की विधि एवं पशुओं की मुख्य व्याधियाँ, बचाव व उपचार (डॉ. ए. सी. माथुर)
	अपराह्न 4 00 – 4.30	चारागाह–क्षेत्र का अवलोकन (डॉ. एम. पाटीदार)
	अपराह्न 4.30 – 5.00	पशु पोषण प्रयोगशाला का अवलोकन (श्री आर. सी. बोहरा)
13 फरवरी	प्रातः 9.00 – 11.00	सम्पूर्ण पशु–आहार बट्टिका, घटक व उत्पादन तकनीक (डॉ. एन. वी. पाटील)
	प्रातः 11 00 – 12.00	लवण–मिश्रण की पशु स्वास्थ्य एवं उत्पादन में महत्ता (डॉ. बी. के. माथुर)
	प्रातः 12.00 – 1.00	काजरी पशु–आहार उत्पाद तकनिकीयों की समीक्षा (डॉ. एच. सी. बोहरा)
	दोपहर 1.00 – 2.30	भोजनावकाश
	अपराह्न 2.30 – 3.30	विषय–विशेषज्ञों के साथ विस्तृत वार्ता
	अपराह्न 3.30 – 4.30	माननीय निदेशक महोदय के साथ प्रशिक्षणार्थियों की वार्ता एवम् प्रमाण–पत्र वितरण
	अपराह्न 4.30 –	प्रशिक्षाणार्थियों का प्रस्थान

* यह प्रशिक्षण कार्यक्रम पशु–आहार तकनीकी इकाई, पशु विज्ञान एवं चारा उत्पादन प्रभाग, केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर द्वारा आयोजित तथा एच.एच. महाराजा हनवंत सिंह जी चैरीटेबल ट्रस्ट, जोधपुर द्वारा प्रायोजित किया जा रहा है। ट्रस्ट के डॉ. वी. डी. जोशी प्रशिक्षणार्थियों के प्रभारी होगें तथा प्रशिक्षणकाल के दौरान इनके साथ रहेंगे।

एच. सी. बोहरा

(एच. सी. बोहरा)
संयोजक

दिनांक : 11/02/2008
स्थान : जोधपुर

सम्पूर्ण एवं पूरक पशु-आहार बट्टिका उत्पादन तकनीकी

पर

त्रिदिवसीय पशु–कृषक प्रशिक्षण कार्यक्रम (11–13 फरवरी, 2008)

प्रशिक्षणार्थियो की सूची

क्र. स.	प्रशिक्षणार्थियो का नाम	पिता का नाम	गांव	जाति	उम्र	फोन न.
1.	श्री आईदान सिंह	श्री बिडद सिंह	गौपालसर	राजपूत	45	9783171509
2.	श्री भंवर सिंह	श्री नरपत सिंह	जीया बेरी	राजपूत	30	9829472669
3.	श्री गौपाल सिंह	श्री खगांर सिंह	जीया बेरी	राजपूत	50	9983717806
4.	श्री खींव सिंह	श्री मंगल सिंह	राजगढ़	राजपूत	45	02929–244559
5.	श्री गुलाब सिंह	श्री मोड़ सिंह	जिंजनीयाला (कल्ला)	राजपूत	40	9828865491
6.	श्री प्रभू राम	श्री भींयाराम	बेलवा	ब्राहण	60	02929–244506
7.	श्री रावल सिंह	श्री नगसिंह	भालू (रतनगढ़)	राजपूत	45	9828868287
8.	श्री जसाराम	श्री तेजाराम	भालू (रतनगढ़)	मेघवाल	20	9783099337